અહો! શ્રુતજ્ઞાનમ્

ગ્રંથ જીર્ણોદ્ધાર

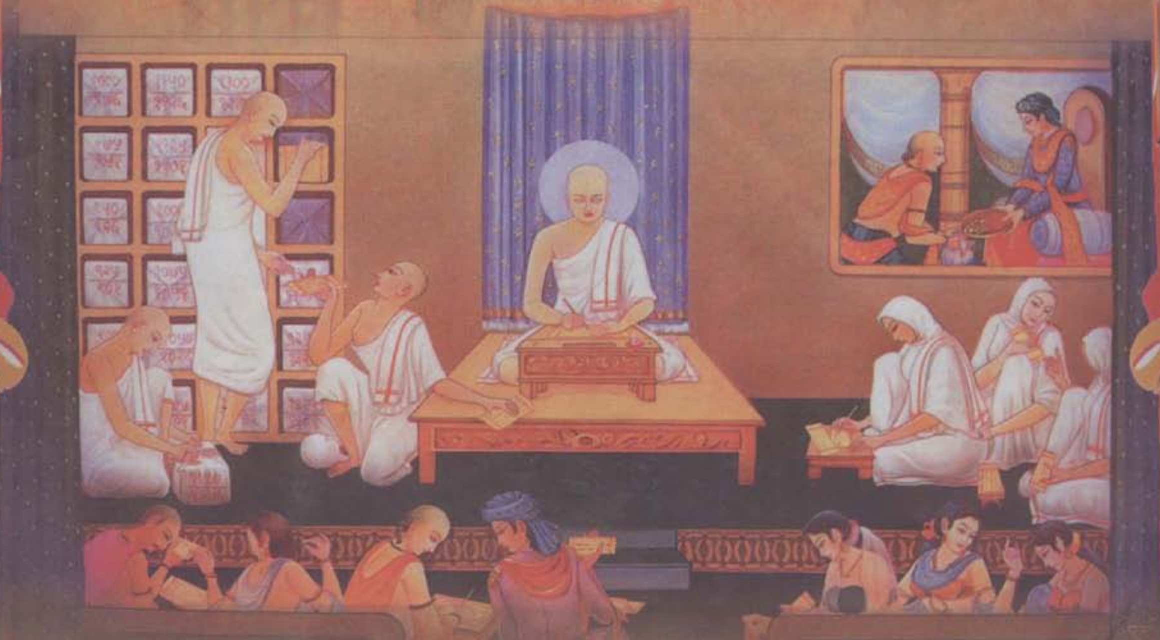

-: સંયોજક :-

શ્રી આશાપૂરણ પાર્શ્વનાથ જૈન જ્ઞાનભંડાર
શા. વિમળાબેન સરેમલ જવેરચંદજી બેડાવાળા ભવન
હીરાજૈન સોસાયટી, સાબરમતી, અમદાવાદ-૩૮૦૦૦૫.
મો. ૯૪૨૬૫ ૮૫૯૦૪ (ઓ.) ૦૭૯-૨૨૧૩૨૫૪૩

"અહો શ્રુતજ્ઞાનમ્" ગ્રંથ જીર્ણોધ્ધાર ૯૯

ભુવનદીપક

: દ્રવ્ય સહાયક :

પૂજ્ય આગમોદ્ધારક આનંદસાગરસૂરીશ્વરજી સમુદાયના
પૂ. સાધ્વીજી શ્રી વજ્રરત્નાશ્રીજી મ.સા. તથા
પૂ. સાધ્વીજી રાજપૂણ્યાશ્રીજી મ.સા.ની પ્રેરણાથી
આગમોદ્ધારક જ્ઞાનશાળાના
જ્ઞાનખાતાની ઉપજમાંથી

: સંયોજક :

શાહ બાબુલાલ સરેમલ બેડાવાળા
શ્રી આશાપૂરણ પાર્શ્વનાથ જૈન જ્ઞાનભંડાર
શા. વીમળાબેન સરેમલ જવેરચંદજી બેડાવાળા ભવન
હીરાજૈન સોસાયટી, સાબરમતી, અમદાવાદ-380005
(મો.) 9426585904 (ઓ.) 22132543

સંવત ૨૦૬૭ ઈ.સ. ૨૦૧૧

"Aho Shrut Gyanam"

અહો શ્રુતજ્ઞાનમ્ ગ્રંથ જીર્ણોદ્ધાર – સંવત ૨૦૬૫ (ઈ. ૨૦૦૯)– સેટ નં-૧

ક્રમાંક	પુસ્તકનું નામ	કર્તા-ટીકાકાર-સંપાદક	પૃષ્ઠ
001	श्री नंदीसूत्र अवचूरी	पू. विक्रमसूरिजीम.सा.	238
002	श्री उत्तराध्ययन सूत्र चूर्णी	पू. जिनदासगणिचूर्णीकार	286
003	श्री अर्हद्गीता-भगवद्गीता	पू. मेघविजयजी गणिम.सा.	84
004	श्री अर्हच्चूडामणि सारसटीकः	पू. भद्रबाहुस्वामीम.सा.	18
005	श्री यूक्ति प्रकाशसूत्रं	पू. पद्मसागरजी गणिम.सा.	48
006	श्री मानतुङ्गशास्त्रम्	पू. मानतुंगविजयजीम.सा.	54
007	अपराजितपृच्छा	श्री बी. भट्टाचार्य	810
008	शिल्प स्मृति वास्तु विद्यायाम्	श्री नंदलाल चुनिलालसोमपुरा	850
009	शिल्परत्नम् भाग-१	श्रीकुमार के. सभात्सवशास्त्री	322
010	शिल्परत्नम् भाग-२	श्रीकुमार के. सभात्सवशास्त्री	280
011	प्रासादतिलक	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	162
012	काश्यशिल्पम्	श्री विनायक गणेश आपटे	302
013	प्रासादमञ्जरी	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	156
014	राजवल्लभ याने शिल्पशास्त्र	श्री नारायण भारतीगोंसाई	352
015	शिल्पदीपक	श्री गंगाधरजी प्रणीत	120
016	वास्तुसार	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	88
017	दीपार्णव उत्तरार्ध	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	110
018	જિનપ્રાસાદ માર્તણ્ડ	શ્રી નંદલાલ ચુનીલાલસોમપુરા	498
019	जैन ग्रंथावली	श्री जैन श्वेताम्बरकोन्फ्रन्स	502
020	હીરકલશ જૈનજ્યોતિષ	શ્રી હિમ્મતરામમહાશંકર જાની	454
021	न्यायप्रवेशः भाग-१	श्री आनंदशंकर बी.ध्रुव	226
022	दीपार्णव पूर्वार्ध	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	640
023	अनेकान्त जयपताकाख्यं भाग-१	पू. मुनिचंद्रसूरिजीम.सा.	452
024	अनेकान्त जयपताकाख्यं भाग-२	श्री एच. आर. कापडीआ	500
025	प्राकृत व्याकरण भाषांतर सह	श्री बेचरदास जीवराजदोशी	454
026	तत्त्पोपप्लवसिंहः	श्री जयराशी भट्ट बी. भट्टाचार्य	188
027	शक्तिवादादर्शः	श्री सुदर्शनाचार्यशास्त्री	214

028	क्षीरार्णव	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	414
029	वेधवास्तु प्रभाकर	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	192
030	शिल्परत्नाकर	श्री नर्मदाशंकरशास्त्री	824
031	प्रासाद मंडन	पं. भगवानदास जैन	288
032	श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय१	पू. लावण्यसूरिजीम.सा.	520
033	श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय२	पू. लावण्यसूरिजीम.सा.	578
034	श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय३ (१)	पू. लावण्यसूरिजीम.सा.	278
035	श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय३ (२) (३)	पू. लावण्यसूरिजीम.सा.	252
036	श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय५	पू. लावण्यसूरिजीम.सा.	324
037	વાસ્તુનિઘંટુ	પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરા	302
038	તિલકમઞ્જરી ભાગ-૧	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	196
039	તિલકમઞ્જરી ભાગ-૨	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	190
040	તિલકમઞ્જરી ભાગ-૩	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	202
041	સપ્તસન્ધાન મહાકાવ્યમ્	પૂ. વિજયઅમૃતસૂરિશ્વરજી	480
042	સપ્તભઙ્ગીમિમાંસા	પૂ. પં. શિવાનન્દવિજયજી	228
043	ન્યાયાવતાર	સતિષચંદ્ર વિદ્યાભૂષણ	60
044	વ્યુત્પત્તિવાદ ગુઢાર્થતત્ત્વાલોક	શ્રી ધર્મદત્તસૂરિ (બચ્છા ઝા)	218
045	સામાન્યનિર્યુક્તિ ગુઢાર્થતત્ત્વાલોક	શ્રી ધર્મદત્તસૂરિ (બચ્છા ઝા)	190
046	સપ્તભઙ્ગીનયપ્રદીપ બાલબોધિનીવિવૃત્તિઃ	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	138
047	વ્યુત્પત્તિવાદ શાસ્ત્રાર્થકલા ટીકા	શ્રીવેણીમાધવ શાસ્ત્રી	296
048	નયોપદેશ ભાગ-૧ તરઙ્ગિણીતરણી	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	210
049	નયોપદેશ ભાગ-૨ તરઙ્ગિણીતરણી	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	274
050	ન્યાયસમુચ્ચય	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	286
051	સ્યાદ્યાર્થપ્રકાશઃ	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	216
052	દિન શુદ્ધિ પ્રકરણ	પૂ. દર્શનવિજયજી	532
053	બૃહદ્ ધારણા યંત્ર	પૂ. દર્શનવિજયજી	113
054	જ્યોતિર્મહોદય	સં. પૂ. અક્ષયવિજયજી	112

અહો શ્રુતજ્ઞાનમ્ ગ્રંથ જીર્ણોદ્ધાર – સંવત ૨૦૬૬ (ઈ. ૨૦૧૦)– સેટ નં-૨

ક્રમ	પુસ્તકનું નામ	ભાષા	કર્ત્તા-ટીકાકાર-સંપાદક	પૃષ્ઠ
055	श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहद्न्यास अध्याय-६	सं	पू. लावण्यसूरिजीम.सा.	296
056	विविध तीर्थ कल्प	सं	पू. जिनविजयजी म.सा.	160
057	ભારતીય જૈન શ્રમણ સંસ્કૃતિ અને લેખનકળા	ગુજ.	पू. पूण्यविजयजी म.सा.	164
058	सिद्धान्तलक्षणगूढार्थ तत्त्वलोकः	सं	श्री धर्मदत्तसूरि	202
059	व्याप्ति पञ्चक विवृत्ति टीका	सं	श्री धर्मदत्तसूरि	48
060	જૈન સંગીત રાગમાળા	ગુ.	श्री मांगरोळ जैन संगीत मंडळी	306
061	चतुर्विंशतीप्रबन्ध (प्रबंध कोश)	सं	श्री रसिकलाल एच. कापडीआ	322
062	व्युत्पत्तिवाद आदर्श व्याख्यया संपूर्ण ६ अध्याय	सं	श्री सुदर्शनाचार्य	668
063	चन्द्रप्रभा हेमकौमुदी	सं	पू. मेघविजयजी गणि	516
064	विवेक विलास	सं/ગુ.	श्री दामोदर गोविंदाचार्य	268
065	पञ्चशती प्रबोध प्रबंध	सं	पू. मृगेन्द्रविजयजी म.सा.	456
066	सन्मतितत्त्वसोपानम्	सं	पू. लब्धिसूरिजी म.सा.	420
067	ઉપદેશમાલા દોઘટ્ટી ટીકા ગુર્જરાનુવાદ	ગુજ.	पू. हेमसागरसूरिजी म.सा.	638
068	मोहराजापराजयम्	सं	पू. चतुरविजयजी म.सा.	192
069	क्रियाकोश	सं/हिं	श्री मोहनलाल बांठिया	428
070	कालिकाचार्यकथासंग्रह	सं/ગુ.	श्री अंबालाल प्रेमचंद	406
071	सामान्यनिरुक्ति चंद्रकला कलाविलास टीका	सं.	श्री वामाचरण भट्टाचार्य	308
072	जन्मसमुद्रजातक	सं/हिं	श्री भगवानदास जैन	128
073	मेघमहोदय वर्षप्रबोध	सं/हिं	श्री भगवानदास जैन	532
074	જૈન સામુદ્રિકનાં પાંચ ગ્રંથો	ગુજ.	श्री हिम्मतराम महाशंकर जानी	376
075	જૈન ચિત્ર કલ્પદ્રૂમ ભાગ-૧	ગુજ.	श्री साराभाई नवाब	374

076	જૈન ચિત્ર કલ્પદ્રુમ ભાગ-૨	ગુજ.	श्री साराभाई नवाब	238
077	સંગીત નાટ્ય રૂપાવલી	ગુજ.	श्री विद्या साराभाई नवाब	194
078	ભારતનાં જૈન તીર્થો અને તેનું શિલ્પસ્થાપત્ય	ગુજ.	श्री साराभाई नवाब	192
079	શિલ્પ ચિન્તામણિ ભાગ-૧	ગુજ.	श्री मनसुखलाल भुदरमल	254
080	બૃહદ્ શિલ્પ શાસ્ત્ર ભાગ-૧	ગુજ.	श्री जगन्नाथ अंबाराम	260
081	બૃહદ્ શિલ્પ શાસ્ત્ર ભાગ-૨	ગુજ.	श्री जगन्नाथ अंबाराम	238
082	બૃહદ્ શિલ્પ શાસ્ત્ર ભાગ-૩	ગુજ.	श्री जगन्नाथ अंबाराम	260
083	આયુર્વેદના અનુભૂત પ્રયોગો ભાગ-૧	ગુજ.	पू. कान्तिसागरजी	114
084	કલ્યાણ કારક	ગુજ.	श्री वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री	910
085	विश्वलोचन कोश	सं./हिं	श्री नंदलाल शर्मा	436
086	કથા રત્ન કોશ ભાગ-1	ગુજ.	श्री बेचरदास जीवराज दोशी	336
087	કથા રત્ન કોશ ભાગ-2	ગુજ.	श्री बेचरदास जीवराज दोशी	230
088	હસ્તસઞ્જીવનમ્	सं.	पू. मेघविजयजीगणि	322
089	એન્દ્રચતુર્વિંશતિકા	सं.	पू.यशोविजयजी, पू. पुण्यविजयजी	114
090	સમ્મતિ તર્ક મહાર્ણવાવતારિકા	सं.	आचार्य श्री विजयदर्शनसूरिजी	560

श्री आशापूरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार

संयोजक – शाह बाबुलाल सरेमल - (मो.) 9426585904 (ओ.) 22132543 - ahoshrut.bs@gmail.com
शाह वीमळाबेन सरेमल जवेरचंदजी बेडावाळा भवन
हीराजैन सोसायटी, रामनगर, साबरमती, अमदावाद-05.

अहो श्रुतज्ञानम् ग्रंथ जीर्णोद्धार – संवत २०६७ (ई. 2011) सेट नं.-३

प्रायः अप्राप्य प्राचीन पुस्तकों की स्केन डीवीडी बनाई उसकी सूची। *यह पुस्तके www.jainelibrary.org वेबसाइट से भी डाउनलोड कर सकते हैं।*

क्रम	पुस्तक नाम	कर्त्ता/टीकाकार	भाषा	संपादक / प्रकाशक	पृष्ठ
91	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-१	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	272
92	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-२	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	240
93	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-३	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	254
94	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-४	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	282
95	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-५	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	118
96	पवित्र कल्पसूत्र	पुण्यविजयजी	सं./अं	साराभाई नवाब	466
97	समराङ्गण सूत्रधार भाग-१	भोजदेव	सं.	टी. गणपति शास्त्री	342
98	समराङ्गण सूत्रधार भाग-२	भोजदेव	सं.	टी. गणपति शास्त्री	362
99	भुवनदीपक	पद्मप्रभसूरिजी	सं.	वेंकटेश प्रेस	134
100	गाथासहस्त्री	समयसुंदरजी	सं.	सुखलालजी	70
101	भारतीय प्राचीन लिपीमाला	गौरीशंकर ओझा	हिन्दी	मुन्शीराम मनोहरराम	316
102	शब्दरत्नाकर	साधुसुन्दरजी	सं.	हरगोविन्ददास बेचरदास	224
103	सुबोधवाणी प्रकाश	न्यायविजयजी	सं./गु	हेमचंद्राचार्य जैन सभा	612
104	लघु प्रबंध संग्रह	जयंत पी. ठाकर	सं.	ओरीएन्ट इस्टी. बरोडा	307
105	जैन स्तोत्र संचय-१-२-३	माणिक्यसागरसूरिजी	सं.	आगमोद्धारक सभा	250
106	सन्मतितर्क प्रकरण भाग-१,२,३	सिद्धसेन दिवाकर	सं.	सुखलाल संघवी	514
107	सन्मतितर्क प्रकरण भाग-४,५	सिद्धसेन दिवाकर	सं.	सुखलाल संघवी	454
108	न्यायसार - न्यायतात्पर्यदीपिका	सतिषचंद्र विद्याभूषण	सं.	एसियाटीक सोसायटी	354

109	जैन लेख संग्रह भाग-१	पुरणचंद्र नाहर	सं./हि	पुरणचंद्र नाहर	337
110	जैन लेख संग्रह भाग-२	पुरणचंद्र नाहर	सं./हि	पुरणचंद्र नाहर	354
111	जैन लेख संग्रह भाग-३	पुरणचंद्र नाहर	सं./हि	पुरणचंद्र नाहर	372
112	जैन धातु प्रतिमा लेख भाग-१	कांतिसागरजी	सं./हि	जिनदत्तसूरि ज्ञानभंडार	142
113	जैन प्रतिमा लेख संग्रह	दौलतसिंह लोढा	सं./हि	अरविन्द धामणिया	336
114	राधनपुर प्रतिमा लेख संदोह	विशालविजयजी	सं./गु	यशोविजयजी ग्रंथमाळा	364
115	प्राचिन लेख संग्रह-१	विजयधर्मसूरिजी	सं./गु	यशोविजयजी ग्रंथमाळा	218
116	बीकानेर जैन लेख संग्रह	अगरचंद नाहटा	सं./हि	नाहटा ब्रधर्स	656
117	प्राचीन जैन लेख संग्रह भाग-१	जिनविजयजी	सं./हि	जैन आत्मानंद सभा	122
118	प्राचिन जैन लेख संग्रह भाग-२	जिनविजयजी	सं./हि	जैन आत्मानंद सभा	764
119	गुजरातना ऐतिहासिक लेखो-१	गिरजाशंकर शास्त्री	सं./गु	फार्बस गुजराती सभा	404
120	गुजरातना ऐतिहासिक लेखो-२	गिरजाशंकर शास्त्री	सं./गु	फार्बस गुजराती सभा	404
121	गुजरातना ऐतिहासिक लेखो-३	गिरजाशंकर शास्त्री	सं./गु	फार्बस गुजराती सभा	540
122	ऑपरेशन इन सर्च ऑफ संस्कृत मेन्यु. इन मुंबई सर्कल-१	पी. पीटरसन	अं.	रॉयल एशियाटीक जर्नल	274
123	ऑपरेशन इन सर्च ऑफ संस्कृत मेन्यु. इन मुंबई सर्कल-४	पी. पीटरसन	अं.	रॉयल एशियाटीक जर्नल	414
124	ऑपरेशन इन सर्च ऑफ संस्कृत मेन्यु. इन मुंबई सर्कल-५	पी. पीटरसन	अं.	रॉयल एशियाटीक जर्नल	400
125	कलेक्शन ऑफ प्राकृत एन्ड संस्कृत इन्स्क्रीप्शन्स	पी. पीटरसन	अं.	भावनगर आर्चीऑलॉजीकल डिपार्टमेन्ट, भावनगर	320
126	विजयदेव माहात्म्यम्	जिनविजयजी	सं.	जैन सत्य संशोधक	148

॥ श्रीः ॥

भुवनदीपकः ।

संस्कृतटीकया

पं० बच्चूशर्मविरचितभाषाटीकया च सहितः ।

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,

मालिक-" लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर " स्टीम्-प्रेस,

कल्याण-बंबई.

संवत् १९९६, शके १८६१.

"Aho Shrut Gyanam"

मुद्रक और प्रकाशक-
गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,
मालिक-" लक्ष्मीवेंकटेश्वर " स्टीम्-प्रेस, कल्याण-बंबई.

सन् १८६७ के आक्ट २५ के बमुजब रजिष्टरी सब
हक्क प्रकाशकने अपने स्वाधीन रक्खा है.

"Aho Shrut Gyanam"

प्रस्तावना।

यह बात किसीसे छिपी नहीं है कि भूत, भविष्य, वर्तमान इन तीनों कालोंकी बात कहनेकी शक्ति देनेवाला केवल ज्योतिष शास्त्र ही प्रसिद्ध है, यद्यपि इस शास्त्रके छोटे बडे अनेकानेक ग्रन्थ हैं और अपने २ विषयमें एकसे एक चढे बढे हैं परन्तु छोटे ग्रन्थोंमें प्रश्न तथा कुण्डलीफल कहनेके लिये जैसा यह उत्तम है वैसा और कोई नहीं और जो लोग संस्कृत भाषाको भलीभांति नहीं समझ सकें उनके लाभार्थ मिथिलामण्डलान्तर्गत कनिगामग्रामनिवासी श्रीचतुर्थे शर्मात्मज ज्योतिर्विद् झोपनामक श्रीबच्चूशर्माद्वारा इसकी सरल भाषाटीका करवाकर व प्राचीन संस्कृतटीका भी शुद्ध कराकर संयुक्त कर दी है। संस्कृतटीका तथा भाषाटीका सहित इस भुवनदीपक ग्रन्थको मैं निज "लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस, कल्याण बम्बई में मुद्रितकर प्रकाशित करता हूँ. आशा है कि ज्योतिषीगण इसे ग्रहण कर स्वयं लाभ उठावेंगे और हमारे परिश्रमको सफल करेंगे।

आपका कृपाभिलाषी—

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष "लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम्) प्रेस,

कल्याण-बम्बई.

"Aho Shrut Gyanam"

अथ भुवनदीपकविषयानुक्रमणिका ।

विषयाः	श्लोकाः
मङ्गलाचरणम्	१
षट्त्रिंशद्द्वारनामानि	२
राशिस्वामिनः	११
ग्रहाणामुच्चनीचराशयः	१३
ग्रहाणां मिथो मित्रशत्रुसमभेदाः	१५
राहोर्विशेषः	१८
ग्रहाणां ग्रामचरवनचरादिभेदाः	२३
तन्वादिद्वादशस्थानेष्ववलोकनपदार्थाः	४३
इष्टकालानयनम्	५५
लग्नचंद्रयोर्बलनिर्णयः	५६
विनष्टग्रहलक्षणम्	६७
राजयोगनिरूपणम्	७२
कार्यविधिज्ञानलाभादिज्ञा०	७९
कार्यनाशज्ञानम्	८४
गर्भक्षेमप्रश्नः	८७
गुर्विण्याः प्रसवः	८८
अपत्ययुग्मप्रसवः	८९
गर्भस्य मासज्ञानम्	९०
भार्या धृता विवाहिता वा इति ज्ञानम्	९१
विषकन्याज्ञानम्	९५
भावान्तकग्रहफलम्	९६
विवाहसमये वृष्टिज्ञानम्	९७
वादप्रश्नः	९९
संकीर्णपदनिर्णयः	१०२
प्रवासिचिंताज्ञानम्	१०७
रोगविषयज्ञानम्	११५
दुर्गभंगज्ञानम्	११७
चौर्यादिज्ञानम्	१२०
क्रयविक्रयज्ञानम्	१२७
नौकाशुभाशुभज्ञानम्	१३८
पुत्रप्राप्तिज्ञानम्	१४५
द्वादशभावानां शुभाशुभज्ञा०	१४७
द्रेष्काणादेव सर्वफलनिर्णयः	१५०
दोषज्ञानम्	१५८
दिनचर्याज्ञानम्	१६०
गर्भस्थपुत्रकन्याज्ञानम्	१६३
ग्रंथसमाप्तिश्लोकः	१७०

इति विषयानुक्रमणिका समाप्ता ।

"Aho Shrut Gyanam"

॥ श्रीः ॥

अथ भुवनदीपकः ।

संस्कृतटीका—भाषाटीकासमेतः ।

सारस्वतं नमस्कृत्य महः सर्वतमोपहम् ॥
ग्रहभावप्रकाशेन ज्ञानमुन्मील्यते मया ॥ १ ॥

सं० टी०—सारस्वतमिति । सरस्वत्याः संबन्धि सारस्वतम् । वा सरस्वत्याः पार्वत्या अपत्यं पुत्रं सारस्वतं गणेशं तच्च तन्महश्च तन्नमस्कृत्य मया ज्ञानमुन्मील्यते प्रकटीक्रियते । कथंभूतं महः ? सर्वस्यापि तमसोऽन्धकारस्याऽपहारकं विनाशकम् । केनोन्मील्यत इत्याह— ग्रहेति । ग्रहाः सूर्यादयः, भावा मेषादिराशयः, तेषां प्रकाशेन प्रकटीकरणेन । अथवा—ग्रहाः सूर्याद्यास्तेषां यो भावः क्रूराऽक्रूरादिरूपस्तत्प्रकाशेन ॥ १ ॥

स्वाभीष्टदेवस्य पदारविन्दं
ध्यात्वा हृदि श्रीचतुर्येतनूजः ।
वच्चूसमाख्यो नृगिराऽस्य टीकां
कुर्वेऽर्भकानन्दकरीं मनोज्ञाम् ॥ १ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ–ग्रन्थकी निर्विघ्न समाप्तिके लिये ग्रंथकी आदिमें मंगल करना शिष्टसंप्रदाय है, इसीलिये यह पद्मप्रभुसूरि नामक आचार्य भी नमस्कारात्मक मंगल करते हैं–कि, सकल अज्ञानरूप अन्धकारोंको नाश करनेवाले सरस्वती सम्बन्धी [या (सारस्वत) पार्वतीजीका पुत्र गणेशरूपी] तेजको नमस्कार करके इस भुवनदीपक नामक ग्रन्थमें सूर्यादि नवग्रह और लग्नादि द्वादश भावोंके व्याख्यारूप प्रकाशद्वारा ज्योतिश्शास्त्र सम्बन्धी ज्ञानको मैं प्रकाश करता हूँ अर्थात् जिस तरह दीपकसे अन्धकारमें स्थित वस्तुओंका ज्ञान होता है, उसी तरह इस " भुवनदीपक " ग्रंथद्वारा ज्योतिश्शास्त्र सम्बन्धी ज्ञानको प्रकाश करता हूँ ॥ १ ॥

गृहाधिपा उच्चनीचा अन्योन्यं मित्रशत्रवः ॥
राहोर्गृहोच्चनीचानि केतुर्यत्रावतिष्ठते ॥ २ ॥

सं° टी°–अस्मिन् ग्रन्थे षट्त्रिंशद्द्वाराणि प्रवर्तन्ते, तस्मात्तान्येव पूर्वमुद्दिशति नवश्लोकैः । अस्मिन् भुवनदीपके षट्त्रिंशद्द्वाराणि वक्ष्यन्त इत्यन्ते सम्बन्धः । गृहाधिपा इति–गृहाणां मेषादीनां लग्नानामधिपाः स्वामिनः १, उच्चनीचत्वम् २, अन्योन्यं मित्रशत्रवः ३, राहोरुच्चनीचगृहाणि ४, केतुर्यत्र यस्मिन् राशौ अवतिष्ठते ५ ॥ २ ॥

अर्थ–इस ग्रंथमें छत्तीस द्वार हैं। उन छत्तीसों द्वारोंमें जो जो विषय आचार्य कहेंगे, उनको पहिले नौ श्लोकोंमें कहते हैं–कि,

"Aho Shrut Gyanam"

१ द्वारमें गृहाधिप अर्थात् मेषादि द्वादश राशियोंके स्वामीका वर्णन, २ में ग्रहोंका उच्च नीचका विचार, ३ में ग्रहोंके परस्पर मित्र और शत्रुका कथन, ४ में राहुका गृह और उच्च तथा नीच, ५ में जिस स्थानपर केतु रहता है, इसका वर्णन करेंगे ॥ २ ॥

स्वरूपं ग्रहचक्रस्य वीक्ष्यं द्वादशवेश्मसु ॥
निर्णयोऽभीष्टकालस्य यथालग्नं विचार्यते ॥ ३ ॥

सं० टी०-ग्रहचक्रस्य स्वरूपम् ६, द्वादशस्वपि गृहेषु कुत्र किं विलोकनीयमिति ७, अभीष्टकालस्य निर्णयः ८, लग्नविचारः ९ ॥ ३ ॥

अर्थ-६ में ग्रहोंके स्वरूप, ७ में बारहों भावोंके बीचमें कौन भावसे क्या देखना उसका वर्णन, ८ में इष्टकालका ज्ञान, ९ में लग्नसम्बन्धी विचार ॥ ३ ॥

ग्रहो विनष्टो यादृक् स्याद्राजयोगचतुष्टयम् ॥
लाभादीनां विचारश्च लग्नेशावस्थितेः फलम् ४॥

सं० टी०-विनष्टो ग्रहः कीदृक् तस्य व्याख्या उच्यते १० राजयोगचतुष्टयम् ११, लाभालाभविचारः १२, लग्नाधिपस्थितेः फलम् १३ ॥ ४ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ–१० में कीदृश ग्रह विनष्ट होता है, उसका विचार, ११ में चार प्रकारके राजयोगोंका कथन, १२ में लाभालाभका विचार, १३ में लग्नेशकी स्थितिसे फल कथन ॥ ४ ॥

गर्भस्य क्षेममेतस्य गुर्विण्याः प्रसवो यदा ॥
अपत्ययुग्मप्रसवो ये मासा गर्भसंभवाः ॥ ५ ॥

सं० टी०–एतस्य गर्भस्य क्षेमं कल्याणमस्ति वा नवा १४, गुर्विण्याः प्रसवः प्रसूतिकालसमयः १५, युगलबालजन्मज्ञानम् १६, ये मासा गर्भसंभवाः संख्याः १७ ॥ ५ ॥

अर्थ–१४ में प्रश्नद्वारा गर्भका कल्याण रहेगा या गर्भपात होगा, इसका विचार, १५ में गुर्विणीके प्रसवसमयका ज्ञान, १६ में यमज अर्थात् दो संतानोंके एकसाथ जन्म होनेका विचार, १७ में जिस मासका गर्भ है, उस मासका निर्णय करेंगे ॥ ५ ॥

धृता विवाहिता भार्या विषकन्या यथा भवेत् ॥
भावान्तगो ग्रहो यादृग्विवाहादिविचारणाः ॥६॥

सं० टी०–धृता उद्धृता विवाहिता भार्या १८, यथा येन प्रकारेण विषकन्या भवेत् १९, भावान्तगस्य ग्रहस्य स्वरूपम् २०, विवाहादिविचारणाः २१ ॥ ६ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ-१८ में कन्यालाभालाभप्रश्नमें धरी हुई या विवाहिता कन्या मिलेगी, इसका विचार, १९ में विषकन्याप्राप्तिके योग जिस तरह होता है, उसका कथन, २० में भावके अन्तमें स्थित ग्रह जिसप्रकार फल करता है, उसका विचार, २१ में विवाहादिक विचार करेंगे ॥ ६ ॥

वक्तव्यता विवादस्य संकीर्णपदनिर्णयः ॥
निश्चयो दीप्तपृच्छासु पथिकस्य गमागमौ ॥७॥

सं० टी०-विवादस्य विवादिनः वक्तव्यता २२, संकीर्णपदनिर्णयः २३, दीप्तपृच्छासु धातुवादादिपृच्छासु निर्णयः २४, पथिकस्य गमागमौ २५ ॥ ७ ॥

अर्थ-२२ में विवाद अर्थात् युद्धादिमें जय पराजयका कथन, २३ में संकीर्णपदका विचार, २४ में दीप्त (क्रूर) या धातुवादादिक प्रश्नमें संदिग्ध वस्तुओंका निश्चय, २५ में प्रवासी मनुष्यका गमागम (जाने आने) का विचार करेंगे ॥ ७ ॥

मृत्युयोगो दुर्गभङ्गश्चौर्यादिस्थानसप्तकम् ॥
क्रयणकार्यविज्ञानं नौमृत्युबन्धनत्रयम् ॥ ८ ॥

सं० टी०-मृत्युयोगः २६, दुर्गभंगः कोटभंगः २७, चौर्यादिस्थानसप्तकम् २८, क्रयणकार्यविज्ञानं समर्घस्वरूपम् २९, नौमृत्युबन्धनानां त्रयं नौकुशलताधरणकादि ३० ॥ ८ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ–२६ में मृत्युयोग कथन, २७ में दुर्ग (किला) भंग होजानेका योग, २८ में चौर्यादि सात स्थानोंका विचार, २९ में क्रयविक्रयकार्याकार्य अर्थात् व्यापारमें लाभालाभका विचार, ३० में नौका, मृत्यु और बंधन इन तीनोंका विचार करेंगे ॥ ८ ॥

लाभादयो दिनेऽतीते फलं मासस्य लग्नपात् ॥
द्रेष्काणादेः फलं सर्वं दोषज्ञानं महाऽद्भुतम् ॥९॥

सं० टी०–अतीते दिने गतदिने लाभालाभादयो विचाराः ३१, लग्नपतेः सकाशात्कदा लाभः कस्मिन्मासे लाभः ३२, द्रेष्काणादिफलम् ३३, अद्भुतदोषज्ञानम् ३४ ॥ ९ ॥

अर्थ–३१ में व्यतीत दिनके लाभालाभ विचार, ३२ में लग्न-स्वामीके वशसे मासफलका विचार, ३३ में द्रेष्काणादिके संपूर्ण फलोंका विचार, ३४ में महान् अद्भुत संबन्धी दोषज्ञानका कथन करेंगे ॥ ९ ॥

दिनचर्या नृपादीनां गर्भेऽस्मिन्किं भविष्यति ॥
षट्त्रिंशदस्मिन्द्वाराणि ग्रन्थे भुवनदीपके ॥१०॥

सं० टी०–राजादीनां कस्मिन्दिने किं भविष्यतीति दिन-चर्या ३५, अस्मिन् गर्भे किं पुत्रकादि ३६, अस्मिन् भुवन-दीपके शास्त्रे षट्त्रिंशद्द्वाराणि नवभिः श्लोकैः कथितानि । इति षट्त्रिंशद्द्वाराणि ॥ १० ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ-३५ में राजादिकोंके दिनचर्या अर्थात् कौन दिनमें क्या शुभाशुभ होगा, उसका विचार, ३६ में इस गर्भमें क्या होगा ? अर्थात् पुत्रादिकका विचार करेंगे। इस "भुवनदीपक" नामक ग्रंथमें ये छत्तीस द्वारोंके विषय मैंने नौ श्लोकोंमें कहे ॥ १० ॥

मेषवृश्चिकयोर्भौमः शुक्रो वृषतुलाभृतोः ॥
बुधः कन्यामिथुनयोः कर्कस्वामी तु चन्द्रमाः ११

सं० टी०-मेषवृश्चिकयोः प्रथमाष्टमयोः स्वामी मंगलः, वृषतुलयोः द्वितीयसप्तमयोः स्वामी शुक्रः, कन्यामिथुनयोः षष्ठतृतीययोः स्वामी बुधः, कर्कस्य चतुर्थभवनस्य स्वामी चन्द्रमाः ॥ ११ ॥

अर्थ-अब प्रथम द्वारमें मेषादिराशिके स्वामीका निर्णय करते हैं-कि, मेष और वृश्चिकका मंगल, वृष और तुलाका शुक्र, कन्या और मिथुनका बुध, तथा कर्क राशिका चन्द्रमा स्वामी है ॥ ११ ॥

स्यान्मीनधन्विनोर्जीवः शनिर्मकरकुम्भयोः ॥
सिंहस्याधिपतिः सूर्यः कथितो गणकोत्तमैः १२

सं० टी०-मीनधन्विनोः द्वादशनवमयोः स्वामी जीवो बृहस्पतिः, मकरकुम्भयोः दशमैकादशयोः स्वामी शनिः, सिंहस्य पंचमस्थानस्याधिपतिः सूर्यः, गणकोत्तमैर्ज्योतिर्विद्भिः कथितः। पूर्वं किल सिंहादिगृहषट्कस्य स्वामी सूर्यः,

"Aho Shrut Gyanam"

कर्कादिगृहषट्कस्य स्वामी चन्द्रः । परं बुधादिग्रहप्रार्थनयैकमेकं दत्तं, चन्द्रसूर्ययोः एकमेकं गृहं स्वस्य स्थितमित्येकैकगृहाधिपतित्वमनयोः अपरेषां च बुधादिग्रहाणां गृहयुगलाधिपतित्वमिति भावार्थः । चन्द्रेण बुधाय मिथुनराशिः दत्तः, सूर्येण कन्याराशिः । चन्द्रेण शुक्राय वृषराशिः, सूर्येण तुलाराशिः । चन्द्रेण भौमाय मेषराशिः, सूर्येण वृश्चिकराशिः । चन्द्रेण गुरवे मीनराशिः, सूर्येण धनूराशिः । चन्द्रेण शनैश्चराय कुम्भराशिः, सूर्येण मकरराशिर्दत्तः ॥ १२ ॥ इति गृहाधिपद्वारं प्रथमम् ॥ १ ॥

अर्थ—मीन और धनुका बृहस्पति, मकर और कुम्भका शनि, तथा सिंहका स्वामी सूर्य है, ऐसा गणितके जाननेवाले उत्तम विद्वानोंने कहा है ॥ १२ ॥

अथ राशिस्वामिचक्रम् ।

ग्रहाः	रवि	चं.	मं.	बुध	बृ.	शु.	श.
राशि.	सिंह	कर्क	मेष	मिथु	धन	वृष	मकर
राशि.	०	०	वृश्चि.	कन्या	मीन	तुला	कुम्भ

इति गृहाधिपद्वारम् ।

"Aho Shrut Gyanam"

रवेर्मेषतुले प्रोक्ते चन्द्रस्य वृषवृश्चिकौ ॥
भौमस्य मृगकर्कौ च कन्यामीनौ बुधस्य च १३

सं० टी०—अथोच्चनीचद्वारमाह—रवेः सूर्यस्य मेष उच्चं, तुला नीचम् । कुतः? सप्तमत्वात् । 'उच्चान्नीचं सप्तममर्कादीनाम्' इत्याद्युक्तत्वाच्च । एवं सर्वत्र ज्ञेयम् । तथा चन्द्रस्य वृष उच्चं, वृश्चिकः नीचम् । तथा भौमस्य मकर उच्चं, कर्कों नीचम्। तथा बुधस्य कन्योच्चं, मीनो नीचम् ॥ १३ ॥

अर्थ—अब द्वितीय द्वारमें उच्च और नीच एकत्र ही क्रमसे कहते हैं—सूर्यका मेष और तुला क्रमसे उच्च और नीच है अर्थात् सूर्यका उच्च मेष राशि है और नीच तुला है । इसी प्रकारसे चन्द्रमाका उच्च वृष है और नीच वृश्चिक है, मंगलका उच्च मकर है और नीच कर्क है, बुधका उच्च कन्या राशि है और नीच मीन है ॥ १३ ॥

जीवस्य कर्कमकरौ मीनकन्ये सितस्य च ॥
तुलामेषौ च मंदस्य उच्चनीचे उदाहृते ॥१४॥

सं० टी०—बृहस्पतेः कर्कः उच्चं, मकरो नीचम् । तथा शुक्रस्य मीन उच्चं, कन्या नीचम् । तथा मंदस्य शनेः तुला उच्चं, मेषो नीचम् । अथ प्रस्तावात्परमोच्चादि शास्त्रान्तराल्लिख्यते—यथा रवेर्मेषतुलेति । प्रागुक्तेषु उच्चभवनेषु त्रिंशांशापेक्षया "दश १० शिख्य३ष्टाविंशति २८ तिथी १५ न्द्रिय५त्रिनवक२७ विंशेषु २० ।" इत्याद्यर्थोऽपरार्धसंज्ञायां ज्ञेयम् । तथा हि-

"Aho Shrut Gyanam"

मेषस्य दशमे त्रिंशांशे रविः परमोच्चगतः सर्वतस्तेजस्कारी । एवं चन्द्रादिष्वपि । उच्चफलं चैतत्–"सुखी १ भोगी २ धनी ३ नेता ४ जायते मण्डलाधिपः ५ ॥ नृपतिश्चक्रवर्ती च ६–७ सूर्याद्युच्चैरनुक्रमात् ॥ १ ॥" जातकेन च परमोच्चसंज्ञा मेषे तु प्रथमदशमभागान् यावत् सूर्ये उच्चं पश्चात्तेजः पातित इति । एवं चन्द्रादिष्वपि । तथा च तुलायां दशमे त्रिंशांशे सूर्यः परमनीचं गतः सर्वतस्तेजोह्रासकारी । एवं चन्द्रादिष्वपि ज्ञेयम् ॥ १४ ॥ इत्युच्चनीचद्वारं द्वितीयम् ॥ २ ॥

अर्थ–बृहस्पतिका कर्क उच्च है और मकर नीच है, शुक्रका उच्च मीन है और नीच कन्या है, शनैश्चरका उच्च तुला है और नीच मेष है, यह ग्रहोंका उच्च नीच कहा है ॥ १४ ॥

अथोच्चनीच–चक्रम् ।

ग्रहाः	रवि	चं.	मं.	बुध	बृ.	शु.	श.
उच्च राशि	मेष	वृष	मकर	कन्या	कर्क	मीन	तुला
नीच राशि	तुला	वृश्चि.	कर्क	मीन	मकर	कन्या	मेष
अंश	१०	३	२८	१५	५	२७	२०

इति उच्चनीचद्वारम् ।

"Aho Shrut Gyanam"

रवीन्दुभौमगुरवो ज्ञशुक्रशनिराहवः ॥
स्वस्मिन्मित्राणिचत्वारिपरस्मिञ्च्छत्रवःस्मृताः ॥

सं०टी०-अन्योन्यमित्रशत्रुद्वारमाह-रविचन्द्रभौमगुरवः एते चत्वारः परस्परं मित्राणि अविरोधित्वात् । तथा ज्ञो बुधः शुक्रशनिराहवोऽपि स्वस्वविषये मित्राणि अविरोधित्वात् । तथा अमीषां चतुर्णां मध्ये यदि पञ्चमः कोपि मिलति स शत्रुरेव परदलत्वात् ॥ १५ ॥

अर्थ-अब तृतीय द्वारमें परस्पर शत्रु मित्र कहते हैं-रवि, चन्द्र, मंगल, बृहस्पति ये चारों परस्पर मित्र हैं, तथा बुध, शुक्र, शनि और राहु ये भी परस्पर मित्र हैं और शेषग्रह शत्रु हैं ॥ १५ ॥

राहुरव्योः परं वैरं गुरुभार्गवयोरपि ॥
हिमांशुबुधयोर्वैरं विवस्वन्मन्दयोरपि ॥ १६ ॥
ज्ञशनी सुहृदौ मित्राण्यर्कचन्द्रकुजाः सदा ॥
पूज्यवर्गौ गुरुसितौ सैंहिकेयस्य कथ्यते ॥ १७ ॥

सं०-टी०-अत्रैव ग्रहाणां परमवैरमाह-राहुरव्योरिति । राहुसूर्ययोः परं वैरम् । बृहस्पतिशुक्रयोरपि तथैव । तथा हिमांशुबुधयोर्वैरम्, विवस्वान् सूर्यो, मन्दः शनैश्चरस्तयोः परं वैरम्,

"Aho Shrut Gyanam"

ज्ञशनी बुधशनैश्चरौ सुहृदौ, अर्कचन्द्रकुजाः सदा मित्राणि, गुरुसितौ परस्परं पूज्यवर्गौ। परमित्यस्य सर्वत्र सम्बन्धः सैंहिकेयस्य कथ्यते इत्यस्याग्रिमश्लोके सम्बन्धः। इति अन्योन्यमित्रशत्रुद्वारं तृतीयम् ॥ १६ ॥ १७ ॥

अर्थ—अब परम वैर और परम मैत्री कहते हैं—राहु और रवि बृहस्पति और शुक्र, चन्द्रमा और बुध, सूर्य और शनि इन दो दो ग्रहोंको आपसमें महावैर है। अब परम मित्र कहते हैं-बुध, शनि, मंगल, चन्द्रमा, और रवि, ये सर्वदा परस्पर परम मित्र हैं और बृहस्पति तथा शुक्र सर्वदा आपसमें पूज्यभाव रखते हैं ॥ १६ ॥ १७ ॥

इति शत्रुमित्रद्वारम् ॥ ३ ॥

यद्बुधस्य ग्रहस्योच्चं राहोस्तद्गृहमुच्यते ॥
यद्बुधस्य गृहं राहोस्तदुच्चं ब्रुवते बुधाः ॥ १८ ॥

सं० टी०—अथ राहूच्चादिद्वारमाह—बुधस्य यदुच्चं कन्यालक्षणं राहोस्तत्सामान्यं गृहमूचिरे। तथा यच्च बुधस्य सामान्यं मिथुनं तद्राहोरुच्चमिति बुधाः पण्डिताः ब्रुवते कथयन्ति ॥१८॥

अर्थ—अब चतुर्थद्वारमें राहुके गृहादिक कहते हैं—जो बुधका उच्च (कन्या) कहा है, वह राहुका गृह है और जो बुधका गृह (मिथुन) है, वह राहुका उच्च है, ऐसा पंडितलोग कहते हैं ॥ १८ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

कन्या राहुगृहं प्रोक्तं राहूच्चं मिथुनं स्मृतम् ॥
राहुनीचं धनुर्वर्णादिकं शनिवदस्य च ॥ १९ ॥

सं०टी०-एतदेव पाठान्तरेणाह-कन्या राहोः सामान्यं गृहं तथा राहोरुच्चं मिथुनं स्मृतं कथितम् । राहोर्नीचं धनुः । अस्य राहोर्वर्णादिकं स्वभावादिकं शनिवत्, एकस्वभावात् १९

अर्थ-पूर्व कथित राहुके गृहादिकको स्पष्ट करते हैं-कि, राहुका गृह कन्या कहा है और उच्च मिथुन कहा है तथा नीच धनराशि है और राहुके स्वरूप आदि शनिके सदृश हैं ॥ १९ ॥

राहुर्दुष्टः परं किंचिदुदास्ते मित्रसद्मनि ॥
कन्यामिथुनयोः किञ्चिद्विधत्ते शुभमप्ययम्॥२०॥

सं० टी०-अथ राहोः स्वभावमाह-राहुर्यद्यपि दुष्टः क्रूरत्वात्तथापि मित्रगृहे बुधशनिगृहे वर्तमानः किञ्चिदुदासीनो भवति, दुष्टकरणाभावात् । तथा कन्यायां मिथुने वा वर्तमानः किञ्चित् शुभमपि विधत्ते करोति । एवमयं राहुः शुभाध्यवसायत्वात् । विशेषश्चायम्-" अजवृषकर्कटलग्ने रक्षति राहुः समस्तदुरितेभ्यः । पृथ्वीपतिः प्रसन्नः कृतापराधं यथा पुरुषम् ॥ " इति भावः पाठान्तरेण तथा मतान्तरम्-" ज्येष्ठः कुजोऽर्क आषाढः शुक्रस्तु श्रावणः शशी । नभस्यो ज्ञोऽश्विनोर्जौ च गुरुमार्गे च

"Aho Shrut Gyanam"

पौषके ॥ मन्दः फाल्गुनमाघौ च राहुश्चैत्रः समाधवः । यद्वा मेषे रविश्चैत्रे इत्यादौ मासनिर्णयः ॥ रवौ मृगादिषट्कस्थे उत्तरायणमन्यथा । दक्षिणायनमेतद्वा लग्नात्पूर्वाऽपरार्धयोः ॥ राशिषट्के रवेराद्ये चन्द्रे शुद्धः परेऽपरः । यस्यां राशौ रवेश्चन्द्रः स पादस्य तिथिद्वयम् ॥ सूर्याक्रान्तादिलग्नानि षड्वासरोऽन्यथा निशा" ॥ २० ॥ इति राहूच्चादिद्वारं चतुर्थम् ॥ ४ ॥

अर्थ–यद्यपि राहु दुष्टग्रह है तथापि मित्र अर्थात् शनि और बुधके घरमें रहनेसे उदासीन रहता है अर्थात् दुष्टफलको नहीं करता है । और कन्या या मिथुन राशिमें होनेसे किंचित् शुभभी करता है ॥ २० ॥

इति राहुगृहोच्चनीचद्वारम् ॥ ४ ॥

राहुच्छाया स्मृतः केतुर्यत्र राशौ भवेदयम् ॥
तस्मात्सप्तमके केतू राहुः स्याद्यत्र चांशके ॥ २१ ॥
तस्मादंशे सप्तमे स्यात्केतोरंशो नवांशकः ॥
त्रिंशांशो भागशब्देन पारम्पर्यमिदं गुरोः ॥ २२ ॥

सं० टी०–अथ केतुस्थितिद्वारमाह–राहुच्छायारूपः केतुः स्मृतः । यत्र यस्मिन् राशौ अयं राहुर्भवेत् तस्माद्राशेः सप्तमे केतुः । अथवा यत्र यस्मिन् नवांशके अयं राहुः स्यात्तस्मात्सप्तमे स्थाने तत्तुल्ये नवांशे केतुः स्यादेवेत्यर्थः ॥ २१ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

तथा तस्मादिति । अर्थः प्रागुक्त एव । परं केतोरंशको नवांशक एव । अत्र भागशब्देन त्रिंशांशकभाग एव ज्ञेयः । परं चानयनप्रकारो गुरोः सकाशाज्ज्ञेयः । " आम्नायाः खलु दुर्लभाः" इत्युक्तत्वादिति प्रत्यक्षमाह-इदं वचनं यस्मिन् ग्रहत्रिंशांशे राहुः स्यात्तस्मिन् ग्रहत्रिंशांशे केतुः स्यात् । "कुजयमजीवज्ञसिताः पञ्चे ५ न्द्रिय५वसु ८ मुनी७न्द्रियांशानाम् ५ । विषमेषु समर्क्षेषूत्क्रमेण त्रिंशांशकाः कल्प्याः ॥ " एवं होराद्रेष्काणदशांशा ज्ञेयाः ॥ २२ ॥ इति केतुस्थितिद्वारं पञ्चमम् ॥ ५ ॥

अर्थ-अब पञ्चमद्वारमें केतुका स्थानादि वर्णन करते हैं-राहुका छायारूप केतु है, इसी लिये राहु जिस राशिमें जितने अंशपर रहता है, उससे सप्तम राशिपर उतने ही अंशपर केतुका स्थान रहता है, इस ग्रन्थमें अंश शब्दसे नवमांश तथा भाग शब्दसे त्रिंशांशका ग्रहण है, ऐसा परंपरासे तथा गुरुद्वारा जानना चाहिये ॥ २१ ॥ २२ ॥

इति केतुस्थितिद्वारम् ॥ ५ ॥

भार्गवेन्दू जलचरौ ज्ञजीवौ ग्रामचारिणौ ॥
राहुक्षितिजमन्दार्का ब्रुवतेऽरण्यचारिणः २३ ॥

सं०टी०-अथ ग्रहस्वरूपादिद्वारमाह-भार्गवः शुक्रः,इन्दुश्चन्द्रमा द्वावपि जलचरौ । ज्ञो बुधो जीवो बृहस्पतिः ग्राम-

"Aho Shrut Gyanam"

चारिणौ । तथा राहुभौमशनैश्चरसूर्याः चत्वारोऽपि अरण्यचारिणः इति पण्डिता ब्रुवते ॥ २३ ॥

अर्थ-अब छठे द्वारमें मूक प्रश्नोत्तरके लिये ग्रहोंके स्थानस्वरूपादि कहते हैं-शुक्र और चन्द्रमा जलचारी हैं, बुध और बृहस्पति ग्रामचारी हैं तथा राहु, मङ्गल, शनि और रवि ये वनचारी हैं, ऐसा पंडित लोग कहते हैं । इसका तात्पर्य यह है कि, प्रश्न समयमें जो ग्रह बलवान् होकर लग्नको देखे या युक्त हो तो उसको कथित स्थानसम्बन्धी वस्तु कहना । जैसे-शुक्र या चन्द्र बलवान् हो तो जल सम्बन्धी इत्यादि ॥ २३ ॥

प्रभातमिन्दुजगुरू मध्याह्नं रविभूमिजौ ॥
अपराह्णं भार्गवेन्दू सन्ध्यां मन्दभुजङ्गमौ ॥ २४ ॥

सं० टी०-ग्रहाणां प्रभातादिकालज्ञानमाह-चिन्तायां कदा नष्टं कदा मूकमिति भावितप्रश्ने इन्दुजो बुधः, गुरुर्बृहस्पतिः सबलौ यदि लग्ने तदा प्रभातकालं कथयतः । तथा सूर्यभौमौ मध्याह्नकालं वदतः । तथा शुक्रचन्द्रौ अपराह्णकालं तृतीयप्रहरं ज्ञापयतः । तथा शनैश्चरराहू संध्याकालं कथयतः । तथा मतान्तरे-"शनिराहुसुराचार्यैं राश्यवस्थितमानतः । त्रिकालविषये कार्यें वर्षाकं ब्रुवते बुधाः ॥ २४ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ-ग्रहपरसे मूकप्रश्नमें कालज्ञान कहते हैं-बुध या बृहस्पति बलवान् होकर लग्नको देखें या युक्त हों तो प्रातःकाल कहना, रवि और मंगलसे मध्याह्न, शुक्र और चन्द्रमासे अपराह्न, शनि और राहुसे संध्याकाल कहना अर्थात् प्रश्नसम्बन्धी वस्तु किस समयमें गई थी, अमुक काम किस समयमें होगा, इत्यादि जाननेके लिये यह कहा गया है ॥ २४ ॥

तिर्यग्दृशौ बुधसितौ भौमार्कौ व्योमदर्शिनौ ॥
जीवेन्दू समदृष्टी च शनिराहू त्वधोदृशौ ॥ २५ ॥

सं० टी०-अथ नष्टादिवस्तुतिर्यगादिसूचकं ग्रहस्वरूपमाह-बुधशुक्रौ तिर्यग्दृष्टी भवतः। मंगलसूर्यावूर्ध्वदृष्टी भवतः । अत्र व्योमशब्देन ऊर्ध्वमुच्यते । दृष्टिवशाच्च कोटचक्रे सुभटे वा घातनिर्णयः । बृहस्पतिचन्द्रौ समदृष्टी भवतः । शनी राहुश्चाधोदृष्टी भवतः। कोऽर्थः-यदा किञ्चिन्नष्टं विनष्टं वा कुत्रास्तीति प्रश्ने यो ग्रहो लग्ने वा वस्तु पश्यति, दृष्ट्यनुसारेण गतवस्तुस्थानं वाच्यमिति भावः। पाठान्तरेण पूर्वादिज्ञानमाह-"शुक्रार्कौ स्तः पूर्वमुखौ गुरुसौम्यावुदङ्मुखौ । सोमशनी च प्रतीच्यौ शेषा दक्षिणतोमुखाः ॥" दृष्टिविशेषमाह पाठान्तरेण-"दशमतृतीये नवपञ्चमे चतुर्थाष्टमे कलत्रं च । पश्यन्ति पाद-

"Aho Shrut Gyanam"

वृद्ध्या फलानि चैवं प्रयच्छन्ति॥" तथा च-" तृतीयेऽकादशे· ११ पादं दलं व्योम १० चतुर्थ ४ के । त्रिकोणे अङ्घ्रिमूर्त्त्यस्ते पूर्णं पश्यन्ति खेचराः ॥"एतदेव पुनर्विशेषमाह-" पूर्णं पश्यति रविजस्तृतीय ३, १० दशमे त्रिकोणमपि जीवः५, ९। चतुरस्रं ४, ८ भूमिसुतः सितार्कबुधहिमकराः कलत्रं च ॥ " ताजिके-"एकादशेऽपि भवने सर्वे पश्यन्ति खेचराः । षट्स्वान्त्या १२ नि न पश्यन्ति दीपान्धा इव खेचराः " ॥ २५ ॥

अर्थ-यहां नष्टादि वस्तुओंके स्थान जाननेके लिये ग्रहोंकी तिर्यगादि दृष्टि वर्णन करते हैं-बुध और शुक्र तिरछी दृष्टिवाले हैं, मंगल और रवि आकाशके तरफ ऊर्ध्व दृष्टिवाले हैं, बृहस्पति और चन्द्रमा समदर्शी हैं, शनि और राहु नीचेकी तरफ दृष्टिवाले हैं । इसका तात्पर्य यह है कि, जो ग्रह बलवान् होकर लग्नको देखे, उस ग्रहकी दृष्टिके समान स्थान सम्बन्धी वस्तु कहना । यथा-रवि या मंगल बलवान् होकर देखें तो आकाश स्थित, बुध या शुक्र देखें तो भित्ति (दीवाल) आदिमें खोदे हुए स्थानमें, बृहस्पति या चन्द्रमा देखें तो समान भूमिमें, शनि या राहु बलयुक्त होकर लग्नको देखें तो भूमिमें खात आदि सम्बन्धी वस्तु जानना ।यहां दृष्टिके संबन्धसे जिस २ स्थानपर जितनी २ दृष्टि ग्रहोंकी होती है, उसको लिखता हूँ-शनिवर्जित सब ग्रह स्वाधिष्ठित स्थानसे तृतीय और दशमको एकपाद दृष्टिसे देखते हैं, परन्तु शनि इन दोनों स्थानोंको पूर्ण दृष्टिसे देखता है । तथा गुरु-

"Aho Shrut Gyanam"

वर्जित सब ग्रह नवम और पञ्चमको द्विपाद दृष्टिसे देखते हैं, परन्तु गुरु इन दोनों स्थानोंको पूर्ण दृष्टिसे देखता है । फिर मंगलवर्जित सब ग्रह चतुर्थ और अष्टमको त्रिपाद दृष्टिसे देखते हैं, परन्तु मंगल इन दोनों स्थानोंको पूर्ण देखता है और सप्तमको सब ग्रह पूर्ण देखते हैं । इसके चक्र भी लिखते हैं ॥

अथ दृष्टिचक्रम् ।

ग्रहाः	रवि	चन्द्र	मंगल	बुध	बृ.	शुक्र	शनि	राहु
एकपाददृष्टि स्थान	३-१०	३-१०	३-१०	३-१०	३-१०	३-१०	०	३-१०
द्वि. दृ. स्था.	५-९	५-९	५-९	५-९	०	५-९	५-९	५-९
त्रि. दृ. स्था.	४-८	४-८	०	४-८	४-८	४-८	४-८	४-८
पूर्ण दृ. स्था.	७	७	४-८ ७	७	५-९ ७	७	३-१० ७	७

इससे सिद्ध हुवा कि, प्रथम, द्वितीय, छठें, ग्यारहवें, बारहवें स्थानोंपर ग्रहोंकी दृष्टि नहीं होती, इसमें एक स्थान स्थित ग्रह युक्त कहलाता है, इसीलिये दृष्टिका उपादान नहीं होनेसे भी पूर्ण फल दायक होता है ॥ २५ ॥

पित्तं प्रभाकरक्ष्माजौ श्लेष्मा भार्गवशीतगू ॥
ज्ञगुरू समधातू च पवनौ राहुमन्दगौ ॥ २६ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

सं० टी०—अथ ग्रहाणां पित्तादिधातुज्ञानमाह—रोगिणां पृच्छायां वा जन्मकाले यदि सूर्यमंगलौ मूर्तौ स्यातां तदा पित्तभावत्वं वदतः । भार्गवः शुक्रः शीतगुश्चन्द्रः श्लेष्मविकारं कथयतः । ज्ञगुरू समधातुभावम् । राहुशनी पवनं वातप्रकोपम् २६

अर्थ—अब रोगादिप्रश्नद्वारा या जन्मपत्रद्वारा मनुष्योंकी प्रकृति जाननेके लिये ग्रहोंकी प्रकृति कहते हैं—सूर्य और मंगल पित्तप्रकृति-वाले हैं, शुक्र और चंद्रमा कफप्रकृतिवाले हैं, बुध और बृहस्पति समधातुवाले हैं अर्थात् पित्त, कफ और वायु ये तीनों सम हैं । राहु और शनि वातप्रकृतिवाले हैं । इसका तात्पर्य यह है कि, प्रश्नसमयमें या जन्मपत्रादिमें जो ग्रह बलवान् होकर लग्नको देखे या युक्त हो उस ग्रहकी प्रकृति प्राणको कहनी चाहिये ॥ २६ ॥

कुजार्कौ कटुकौ जीवो मधुरस्तुवरो बुधः ॥
क्षाराम्लौ चन्द्रभृगुजौ तीक्ष्णौ सर्पार्कनन्दनौ ॥ २७

सं० टी०—अथ ग्रहाणां रसज्ञानमाह—कुजो मंगलः, अर्कः सूर्यः द्वावपि कटुकस्वभावौ । गुरुः मधुरस्वभावः । बुधस्तुवरः कषायप्रकृतिः । चन्द्रः क्षारः । शुक्रः अम्लः । राहुशनी तीक्ष्णौ, क्रूरप्रकृतिकत्वादिति भावः ॥ २७ ॥

अर्थ—यह प्राणी किस रसका प्रिय है, इसको जाननेके लिये ग्रहोंके रस कहते हैं—मंगल और रवि कडुवा रसके प्रिय हैं, बृहस्पति मधुर

"Aho Shrut Gyanam"

रसका प्रिय है, बुध तुवर (कषाय) रसका प्रिय है, चंद्रमा क्षारप्रिय है, शुक्र अम्ल (खट्टा) रसका प्रिय है, राहु और शनि तीक्ष्णरस प्रिय है । प्रयोजन यह है कि, जन्मपत्रमें या प्रश्नकुण्डलीमें जो ग्रह बलवान् होकर लग्नको देखे या युक्त हो, उस ग्रहके जो रस कहे हैं, वह प्राणी भी उसी रसका प्रिय होगा ॥ २७ ॥

मन्देंदूरगभौमाः स्युर्धातुः सवितृभार्गवौ ॥
मूलं जीवश्च सौम्यश्च जीवं प्राहुर्महाधियः२८॥

सं०टी०-अथ धातुमूलजीवज्ञानमाह-मन्दः शनैश्चरः इन्दुः चन्द्रमाः, उरगो राहुः, भौमो मंगलः, चतुर्णां मध्ये यद्येकोऽपि लग्ने भवति वा पश्यति तदा धातुं वदति । प्रच्छकस्येति शेषः । सूर्यशुक्रौ लग्ने वर्तमानौ पश्यन्तौ वा मूलचिन्तां कथयतः । जीवो बृहस्पतिः, सौम्यो बुधः लग्ने वर्तमानौ पश्यन्तौ वा जीवचिन्तां वदतः । महाधियः पण्डिता इति वदंति । पाठान्तरेणापि धात्वादिज्ञानमाह-" बलिनौ केन्द्रोपगतौ रविभौमौ धातुकारकौ प्रश्ने । बुधसौरी मूलकरौ शशिगुरुशुक्रास्तथा जीवम् ॥ स्वगृहं स्वोच्चं हद्दा त्रैराशिकमथ मुशल्लहं चैते । पंचगृहाधिकारं विनाऽधिकारं ग्रहो न बली ॥ मन्दारसौम्यवाक्पतिसितचन्द्रार्का यथोत्तरं बलिनः । नैस-

गिकबलमेतद्बलसाम्ये स्यादाधिकबलचिंता ॥ " तत्र जीवास्त्रिधा ॥ २८ ॥

अर्थ–प्रश्नद्वारा धातु, मूल और जीवज्ञान कहते हैं–यदि प्रश्न समयमें शनि, चन्द्रमा, राहु, मङ्गल इनमें कोई बली होकर लग्नको देखे या युक्त हो तो धातुचिंता जाननी, सूर्य और शुक्र हों तो मूलचिंता, बृहस्पति और बुध हों तो जीवचिंता कहनी चाहिये, ऐसा महान् बुद्धिमानोंने कहा है ॥ २८ ॥

द्विपदौ भार्गवगुरू भौमार्कौं च चतुष्पदौ ॥
पक्षिणौ बुधसौरी च चन्द्रराहू सरीसृपौ॥२९॥

सं० टी०–तत्रापदद्विपदचतुष्पदादिज्ञानमाह–द्विपदौ इति । भार्गवगुरू द्विपदौ । कोऽर्थः–द्विपदचिन्तां कथयतः । अथवा वस्तुचौरज्ञाने द्विपद इति, सर्वत्र ज्ञाने विचारणीयम् । मङ्गलादित्यौ द्वौ चतुष्पदौ प्राग्वत् । बुधशनी खगौ पक्षिणौ भवतः । चन्द्रराहू सरीसृपौ सर्पौ, अपदाविति शेषः । प्राग्वदिति चिन्त्यौ ॥ २९ ॥

अर्थ–पूर्वकथितानुसार जीवचिंता ज्ञात होनेसे द्विपदादि ज्ञानार्थ ग्रहोंकी द्विपदादि संज्ञा कहते हैं–शुक्र और बृहस्पति द्विपदसंज्ञक हैं, मंगल और रवि चतुष्पदसंज्ञक हैं, बुध और शनि पक्षीसंज्ञक हैं,

"Aho Shrut Gyanam"

चन्द्रमा और राहु सरीसृप (सर्पादि) संज्ञक हैं । तात्पर्य यह है कि, जीव ज्ञात होनेसे कौन जीव है, इसको जाननेके लिये जो ग्रह बली होकर लग्नको देखे या युक्त हो उसी ग्रहका कथित जीव कहना ॥ २९ ॥

विप्रौ शुक्रगुरू क्षत्रौ कुजार्कौ शूद्र इन्दुजः ॥
इन्दुर्वैश्यः स्मृतौ म्लेच्छौ सैंहिकेयशनैश्चरौ ३० ॥

सं० टी०-अथ जातिविशेषमाह-जातिः पञ्चधा प्रोक्ता विप्राविति । शुक्रबृहस्पती विप्रजातिं वदतः । मंगलसूर्यौ क्षत्रियजातिं कथयतः । बुधः शूद्रजातिं वदति । चन्द्रो वैश्य-जातिम् । राहुशनी म्लेच्छजाती म्लेच्छेतरजातिश्चांडालादि-रिति शेष इति भावः ॥ ३० ॥

अर्थ-अब पूर्वकथितानुसार यदि द्विपद आवे तो जाति जाननेके लिये ग्रहोंकी जाति कहते हैं-शुक्र और बृहस्पति ब्राह्मण हैं, मंगल और रवि क्षत्रिय हैं, बुध शूद्र है, चन्द्रमा वैश्य है, राहु और शनैश्चर म्लेच्छ कहे गये हैं । इसका आशय यह है कि, जो ग्रह बलवान् होकर लग्नको देखता हो या लग्नमें हो उस ग्रहका कहा हुआ जाति प्रश्नसंबन्धी द्विपदका कहना ॥ ३० ॥

"Aho Shrut Gyanam"

स्थूल इन्दुः सितः षण्ढश्चतुरस्रौ कुजोष्णगू ॥
वर्तुलौ सौम्यधिषणौ दीर्घौ शनिभुजंगमौ ॥३१॥

सं० टी०—अथ देहस्वरूपमाह—स्थूल इति । चन्द्रः स्थूलाङ्गो न कृश इति शेषः । शुक्रः षण्ढः नपुंसकादिः, आदिपदेन बालकोऽतिवृद्धो वा, कन्दर्परहित इति शेषः । कुजो भौमः, उष्णगुः सूर्यः, तौ चतुरस्रौ चतुष्कोणौ नात्युच्चाङ्गौ न लघू इति शेषः । बुधबृहस्पती वर्तुलाकारौ । शनिराहू दीर्घौ कथयतः इति सर्वत्र विचार्यम् ॥ ३१ ॥

अर्थ—उस मनुष्यका आकार जाननेके लिये ग्रहोंका आकार कहते हैं । चन्द्रमा मोटे शरीरवाले हैं, शुक्र षंढ (निर्वीर्य) अर्थात् दुर्बल है, मंगल और रवि समान शरीरवाले हैं, बुध और बृहस्पति वर्तुल (गोलाकार) शरीरवाले हैं, शनि और राहु दीर्घ (लंबा) आकारवाले हैं, इसमें जो ग्रह सर्वाधिक बली होकर लग्नको देखे या लग्नमें स्थित हो, उसी ग्रहका आकार उस मनुष्यका कहना ॥ ३१ ॥

रक्तवर्णः कुजः प्रोक्तो धिषणः कनकद्युतिः ॥
शुकपिच्छसमः सौम्यो गौरकान्तिरथोष्णगुः ३२॥
मन्दारार्कस्य पुष्पेण समद्युतिरनुष्णगुः ॥
कविरत्यंतधवलः फणी कृष्णः शनिस्तथा ॥३३॥

"Aho Shrut Gyanam"

सं० टी०-अथ ग्रहाणां वर्णस्वरूपमाह-रक्तवर्ण इति । भौमो रक्तवर्णः । धिषणो बृहस्पतिः कनकद्युतिः स्वर्णकांतिः । बुधः शुकपिच्छसमः नीलकान्तिः । उष्णगुः सूर्यो गौर-कांतिः ॥ ३२ ॥ मंदारार्कस्य मंदारः कल्पवृक्षस्तदभावे अर्कपुष्प इव कांतिः । अनुष्णगुश्चन्द्र इति शेषः । कविः शुक्रः अत्यन्तधवलः श्वेतः । शनिराहू कृष्णवर्णौ अतिश्यामौ इति ॥ ३३ ॥

अर्थ-अब स्वरूप जाननेके लिये ग्रहोंका स्वरूप कहते हैं-मंगलका रक्त वर्ण, बृहस्पतिका सुवर्णके सदृश वर्ण, बुधका शुकपक्षीके पक्षसम नील वर्ण, सूर्यकी गौरकांति, चन्द्रमाकी पारिजात पुष्पके सदृश या आकके फूल सदृश कांति, शुक्रका अति शुक्लवर्ण, राहु और शनि कृष्ण वर्ण कहे गये अर्थात् जो ग्रह बली होकर लग्नको देखे या लग्नमें हो, उसका वर्ण उस मनुष्यका कहना ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

अवनीशो दिनमणिस्तपस्वी रोहिणीप्रियः ॥
स्वर्णकारः क्षितेः पुत्रो ब्राह्मणो रोहिणीभवः ॥ ३४ ॥
वणिग्गुरुः कविर्वैश्यो वृषलः सूर्यनंदनः ॥
सैंहिकेयो निषादश्च सर्वैः कार्येषु संमतः ॥ ३५ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

सं० टी०—अथ ग्रहाणामधिकारविशेषमाह—अवनीश इति । अवनिः पृथिवी तदीशो राजा इव सूर्यः । रोहिणीप्रियश्चन्द्रः सोऽपि तपस्वीति । अत्रिजत्वात्तदुपवृत्तिः । क्षितिपुत्रो भौमः स्वर्णकारः वृत्तिविशेषः । बुधो ब्राह्मणः ॥ ३४ ॥ बृहस्पतिर्गुरुः वणिक्पुत्र इति शेषः । कविः शुक्रो वैश्यः अतिधनीति शेषः । सूर्यनंदनः शनिः दासः अनुचर इति शेषः । सैंहिकेयो राहुः निषादश्चण्डालः हिंसक इति शेषः । सर्वेष्वपि शुभाशुभकार्येषु कथितः इति । जीवचिन्तायां वाच्यमिति ॥ ३५ ॥

अर्थ—मनुष्यके अधिकार जाननेके लिये ग्रहोंका अधिकार कहते हैं— सूर्य राजा है, चन्द्रमा तपस्वी है, मंगल सुनार है, बुध ब्राह्मण है, बृहस्पति वणिक् (बानियां) है, शुक्र वैश्य है, शनि दास है और राहु चाण्डाल है, यह विचार सब कार्यमें सम्मत है । आशय यह है कि, जन्मपत्रमें या प्रश्नसमयमें जो ग्रह अधिक बलवाला हो और लग्नको देखे या युक्त हो, उस ग्रहकी आजीविका उस मनुष्यको कहनी चाहिये, यह जीवचिंता हुई ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

शुक्रे चंद्रे भवेद्रौप्यं बुधे स्वर्णमुदाहृतम् ॥
गुरौ रत्नयुतं हेम सूर्ये मौक्तिकमुच्यते ॥ ३६ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

भौमे त्रपु शनौ लोहं राहावस्थीनि कीर्तयेत् ॥
धातोर्विनिश्चये ज्ञाते विशेषोऽस्मादुदाहृतः॥३७॥

सं० टी-अथ धातुचिन्ताविशेषमाह-शुक्र इति । शुक्रे वा चन्द्रे लग्नस्थिते पश्यति वा तदा धातूनां मध्ये रौप्यं वाच्यम् । बुधे च स्वर्णं स्यादित्युदाहृतं कथितम् । गुरौ तथा स्थिते च रत्नजडितं स्वर्णम् । सूर्ये मौक्तिकं वा जडितं भूषणं चोच्यते कथ्यते ॥ ३६ ॥ भौम इति । भौमे लग्नस्थे वा लग्नं पश्यति तदा धातुमध्ये त्रपु सीसकं वाच्यम् । शनौ च लोहादि । आदिपदेन पाषाणसंग्रहः । राहौ च अस्थीनि हस्तिदन्तादि कीर्तयेत् कथयेत् पण्डित इति शेषः । एवं लग्ने ग्रहदर्शनाद्धातूनां विशिष्टे निश्चये जाते अस्मात्कथितप्रकाराद्धातोर्विशेष उदाहृतः कथितः । ज्योतिर्विद्भिरिति तमेव विशेषस्थानं कथयति ॥ ३७ ॥

अर्थ-अब पूर्वरीतिसे यदि धातुचिंता आवे तो कौन धातु है, इसके जाननेके लिये ग्रहोंके द्वारा धातुज्ञान लिखते हैं-शुक्र या चद्रमा लग्नमें स्थित हों या लग्नको देखते हों तो रौप्य (चांदी) जानना, बुध हो तो सोना कहा है, बृहस्पति हो तो रत्नसे जडा हुआ सोना, सूर्य हो तो मोती, मङ्गल हो तो सीसा, शनि हो तो

"Aho Shrut Gyanam"

लोहा, राहु हो तो हड्डी आदि कहना चाहिये । धातुज्ञान निश्चय होनेके पीछे इसीप्रकार विशेष धातुज्ञान कर लेना ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

शुक्रे चन्द्रे जलाधारो देवतावसतिर्गुरौ ॥
रवौ चतुष्पदस्थानमिष्टकानिचयो बुधे ॥ ३८ ॥
दग्धस्थानं कुजे प्रोक्तं शनौ राहौ च बाह्यभूः ॥
अमीभिर्हिबुकस्थाने नष्टभूमिं विलोकयेत् ॥ ३९ ॥

सं० टी०—अथ ग्रहाणां स्थानविशेषमाह—शुक्र इति । शुक्रे चंद्रे वा लग्ने स्थिते पश्यति वा जलाशयः जलस्थानं ज्ञेयम् । गुरौ देवालयस्थानं च । रवौ च चतुष्पदस्थानम् । बुधे च इष्टकानिचयः, पाषाणादिस्थानमिष्टकासमूहो वाच्यः ॥ ३८ ॥ कुजे भौमे दग्धस्थानम्, अग्निदग्धमिति शेषः, तत्प्रोक्तं कथितम् । शनौ राहौ च बाह्यभूः । उद्यानपर्वतादिः, अथवा बहिर्भूः मलस्थानमिति शेषः । अमीभिरिति । अमीभिः सूर्यादिग्रहैः कृत्वा हिबुकस्थाने चतुर्थस्थाने निधनादिपृच्छायाम् ' क गतः ' इति धनादिप्रश्ने यदि चतुर्थ-स्थाने लग्नपतिः स्वामी वाऽन्यः कोऽपि ग्रहो भवति पश्यति वा तदा तदनुसारेण प्रागुक्तग्रहस्थानतया विचार्य नष्टवस्तुस्थानं वक्तव्यमिति भावः ॥ ३९ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ-अब नष्टवस्तुआदि किस स्थानमें है, इसको जाननेके लिये, दो श्लोक कहते हैं-शुक्र या चन्द्रमा लग्नमें स्थित हो या देखता हो तो नष्टवस्तु आदि जलमें जानना, बृहस्पति हो तो देवताका स्थान, रवि हो तो चतुष्पद (पशु) के रहनेका स्थान, बुध हो तो ईंटसमूहोंका स्थान, मंगल हो तो दग्ध हुआ स्थान, शनि या राहु हो तो बाहरकी भूमि अर्थात् वन पर्वत आदि जाने । इन ग्रहों द्वारा चतुर्थ स्थानमें नष्ट वस्तुका विचार करना चाहिये । अर्थात् लग्नका स्वामी या अन्य कोई ग्रह चतुर्थ स्थानमें हो या देखता हो तो उसी ग्रहके कथित स्थानमें नष्ट वस्तु है, ऐसा कहना चाहिये ॥ ३८॥३९॥

जीवमङ्गलमार्तण्डान्वदन्ति पुरुषान्बुधाः ॥
सोमसोमजमन्दाहिभृगुपुत्रांश्च योषितः ॥ ४० ॥

सं० टी०-अथ वस्तुस्थापकस्य ग्राहकस्य वा चौरादिज्ञान-माह-जीवेति । जीवभौमसूर्यांस्त्रीनपि ग्रहान् बुधाः पुरुषान् एतेषां मध्ये एकोऽपि कश्चिल्लग्नस्थो वा पश्यति तदा पुरुषान् कथयंति दैवज्ञा इति शेषः । सोमश्चन्द्रः, सोमजो बुधः, मन्दः शनिः, अही राहुः, भृगुपुत्रः शुक्रस्तान् योषित्संज्ञकान् स्त्रीसंज्ञकान् बुधा दैवज्ञा वदन्ति । अतस्तान् पदार्थान् स्त्रीहस्तांगीकृतानिति वदन्ति । एषां मध्ये एकोऽपि ग्रह इति शेषः ॥४०॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ—अब यहां जीवचिंतामें पुरुषसंज्ञक जीव है या स्त्रीसंज्ञक; इसको जाननेके लिये ग्रहोंकी स्त्रीपुरुषसंज्ञा लिखते हैं—बृहस्पति, मङ्गल और रवि इनको पंडितजन पुरुषग्रह कहते हैं, सोम, बुध, शनि, राहु और शुक्र इनको स्त्रीग्रह कहते हैं । आशय यह है कि, यदि पुरुषसंज्ञक ग्रह लग्नमें स्थित हो या लग्नको देखता हो तो जीव भी पुरुषसंज्ञक जानना, और स्त्री ग्रह हो तो स्त्री जाननी । इसी प्रकार चौरादि ज्ञानमें भी स्त्री पुरुषका विवरण कर लेना चाहिये ॥ ४० ॥

युवा कुजः शिशुः सौम्यः शशिशुक्रौ च मध्यमौ ॥
मन्दमार्तण्डदेवेज्यफणिनः स्थविरा ग्रहाः ॥ ४१ ॥

सं० टी०—इदानीं ग्रहाणां वयोऽनुमानस्वरूपमाह—युवेति । यदा चतुर्थस्थाने मंगलसंबंधिमेषवृश्चिकरूपं भवत्यथवा चतुर्थस्थानाधिपतिर्भौमस्तत्रस्थो वा पश्यति, तदा वाच्यं वस्तुग्राहकश्चोरो युवा तरुणोऽस्तीति । यदि चतुर्थस्थानाधिपतिर्बुधस्तदा बालको द्वादशवर्षाभ्यन्तरवयस्कश्चोर इति शेषः । चन्द्रः शुक्रो वा चतुर्थस्थानाधिपतिः तदा मध्यवयाः पुरुषश्चोरश्चत्वारिंशदवधि इति शेषः । यदि चतुर्थस्थाने शनिसूर्यगुरुराहुसंबन्धी कश्चन भवति, तदा वृद्धश्चोरः । कोऽर्थः—चत्वारिंशदूर्ध्वमायुः । प्रश्नलग्नाच्चतुर्थस्थानाधिपतिविचारणया

"Aho Shrut Gyanam"

चोरवयो वाच्यमित्यर्थः । वर्णजात्यादिकञ्च प्रागुक्तयुक्त्या विप्रादि ज्ञेयम् । इति पूर्वसंबन्धः ॥ ४१ ॥

अर्थ–अब उस जीवकी अवस्था (उमर) जाननेके लिये ग्रहोंकी उमर कहते हैं–मंगल युवा अवस्थाका है, बुध बालक, चन्द्रमा और शुक्र मध्यम अर्थात् अर्धवयस्क हैं; शनि, रवि, बृहस्पति और राहु ये वृद्ध अवस्थावाले हैं। इसका आशय यह है कि, जो ग्रह लग्नसे चतुर्थस्थानका स्वामी हो या चतुर्थ स्थानमें स्थित हो या देखता हो उस ग्रहकी अवस्था चौर आदिको कहना चाहिये ॥ ४१ ॥

भौममन्दार्कभोगीन्द्राः प्रकृत्या दुःखदा नृणाम् ॥
ज्ञगुरुश्वेतकिरणशुक्राः सुखकराः सदा ॥ ४२ ॥

सं० टी०–अथ ग्रहाणां प्रकृतिस्वरूपमाह–भौमेति । भौमशनिसूर्यराहवः प्रकृत्या स्वभावेन लोकानां दुःखदायका भवंति क्रूरत्वादिति शेषः। बुधगुरुचन्द्रशुक्राः स्वभावेन सौख्यदायकाः स्युः। सौम्यप्रकृतित्वादिति भावः । एवं वस्तुज्ञाने च सर्वज्ञानम् ॥ ४२ ॥ इति ग्रहस्वरूपादिद्वारं षष्ठम् ॥ ६ ॥

अर्थ–अब ग्रहोंकी प्रकृति कहते हैं–मंगल, शनि, रवि, राहु ये क्रूर (पाप) ग्रह सर्वदा मनुष्योंको दुःख देनेवाले हैं और बुध, बृहस्पति, चन्द्रमा, शुक्र ये शुभग्रह होनेके कारण सर्वदा मनुष्योंको

"Aho Shrut Gyanam"

सुख देनेवाले हैं । इस द्वारमें कहे हुए विचारद्वारा धातु, मूल, जीव, स्वरूप, जाति, अवस्था, स्थान, काल, देश, दिशा आदि सभी प्रश्नोंमें ज्ञात कर लेना चाहिये ॥ ४२ ॥

इति ग्रहस्वरूपादिद्वारम् ॥ ६ ॥

रूपलक्षणवर्णानां क्लेशदोषसुखायुषाम् ॥
वयःप्रमाणजातीनां तनुस्थानान्निरीक्षयेत् ॥४३॥

सं० टी०—अथ भावविचारद्वारमाह—रूपेति । रूपं कृष्णादि । लक्षणं मशादिज्ञानम् । वर्णो ब्राह्मणादिः । क्लेशः दुःखकष्टादिः रोगिजीवितमरणादिः । दोषश्छलच्छिद्रादिः । वक्ष्यमाणसुखं योषिदादिभवम् । वयो बालकतरुणादि । प्रमाणम् अनुमानम्—आयुषामिति शेषः । जातिरिति प्रसिद्धा एते रूपादयः पृच्छानिर्णयाः प्रथमात्तनुस्थानाज्ज्ञेयाः प्रथमस्थानानुसारेणापि विचारणीयाः । इति तनुभावविचारोऽयम् ॥ ४३ ॥

अर्थ—अब सप्तम द्वारमें कौन भावसे क्या विचार करना, उसको कहते हैं—रूप (दीर्घ लघु स्थूलादि), लक्षण (तिलामसकादि), वर्ण (गौरकृष्णादि), क्लेश (दुःख) दोष (अवगुणआदि), सुख (धनस्त्रीपुत्रादि), वयस् (बालकादि) का प्रमाण, जाति (ब्राह्मणादि) इनको लग्नसे देखना चाहिये ॥ ४६ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

मणिमुक्ताफलं स्वर्णं रत्नधातुकदम्बकम् ॥
क्रयाणकार्घज्ञानानिधनस्थानान्निरीक्षयेत् ॥४४॥

सं॰ टी॰–अथ द्वितीयस्थानवीक्षणमाह–मणिमुक्तेति । मणिश्चन्द्रकान्तादिः । मुक्ताफलं प्रसिद्धम् । स्वर्णं प्रसिद्धम् । रत्नं वैडूर्यादि । धातूनां लोहादीनां सप्तानां कदम्बकं समूहः । तथा क्रयाणकानि मञ्जिष्ठादीनि त्रिषष्टिशतसंख्यानीति तेषाम् अर्घस्य महर्घसमर्घादेः परिज्ञानमवबोधः । एतत् सर्वं धनस्थानाद्द्वितीयस्थानाद्विलोकनीयं विचारणीयमित्यर्थः ॥ ४४ ॥

अर्थ–अब द्वितीय भावका विचार लिखते हैं–मणि, मोती, सोना, रत्न (हीरकादि) और धातुसमूह, क्रयाणक (मंजिष्ठादि) धान्यविशेष इन सब चीजोंकी महर्घतासमर्घतादिक विचार धनभाव (द्वितीय स्थान) से करना चाहिये ॥ ४४ ॥

भगिनीभ्रातृभृत्यानां दासकर्मकृतामपि ॥
कुर्वीत वीक्षणं विद्वान्सम्यग्दुश्चिक्यवेश्मनि ॥४५॥

सं॰ टी॰–अथ तृतीयस्थाननिरीक्षणमाह–भगिनी सहोदरी । भ्राता प्रसिद्धः । भृत्यः सेवकः । दासः प्रसिद्धः । कर्मकृतां प्रेष्यकादीनां सर्वेषाम् । वीक्षणं विचारणं विद्वान्पण्डितः

"Aho Shrut Gyanam"

दुश्चिक्यवेश्मनि तृतीयभवने सम्यक् नान्यथाभावेन विचार्यं कुर्वीतेति ॥ ४५ ॥

अर्थ—बहिन, भाई, भृत्य (नौकर), दासकर्म (टहल) करनेवाला इन सबोंको तृतीय भावसे देखना चाहिये ॥ ४५ ॥

वाटिकाखलकक्षेत्रमहौषधिनिधीनिह ॥
विवरादिप्रवेशं च पश्येत्पातालतो बुधः ॥ ४६ ॥

सं० टी०—अथ चतुर्थभवननिरीक्षणमाह—वाटिका पुष्पवनम् । खलकं धान्यकुट्टनगाहनस्थलम् । क्षेत्रं प्रसिद्धम् । महौषधयोऽष्टशतसंख्याः । निधीन् द्रव्यं च निखातादीनि । विवरादिप्रवेशम् । आदिना गृहप्रवेशसुखादिकम् । पातालतश्चतुर्थभावतो बुधो दैवज्ञः पश्येत् । धातूनामनेकार्थत्वाद्विचारयेदिति भावः ॥ ४६ ॥

अर्थ—वाटिका (फुलवाडी), खलक (धान्य कूटने तथा मर्दन करनेका स्थान), महौषधि, खानि, पर्वतके कन्दरे आदिमें प्रवेश इन सब विषयोंको पंडित जन चतुर्थ भावसे देखें ॥ ४६ ॥

गर्भापत्यविनेयानां मन्त्रसाधनयोरपि ॥
विद्याबुद्धिप्रबन्धानां सुतस्थानाद्विनिश्चयः ॥४७॥

सं० टी०—अथ पञ्चमगृहवीक्षणमाह—गर्भस्वरूपम्, अपत्यम् अपत्योत्पत्त्यादि । विनयः शिष्यादिः । मन्त्रसाधनं

"Aho Shrut Gyanam"

विद्यासाधनमन्त्रकरणादि । विद्या आकाशगमनमित्यादि । बुद्धिः प्रसिद्धा। प्रबन्धो नवीनशास्त्रकथारूपः। 'प्रतापानाम्' इत्यपि पाठः । एतेषां सुतात्पञ्चमस्थानाद्विनिश्चयो वाच्यः ॥ ४७ ॥

अर्थ-गर्भ, सन्तान, विनेय (शिष्य), मन्त्र अर्थात् मंत्रका उपदेश लेना और उसका साधन करना, विद्या, बुद्धि, प्रबंध (ग्रंथादिकी रचना) इन सबोंका निश्चय पञ्चम स्थानसे करना चाहिये ॥ ४७ ॥

सैरिभीरिपुसंग्रामगवोष्ट्रक्रूरकर्मणाम् ॥
मातुलातङ्कशङ्कानां रिपुस्थानाद्विनिर्णयः ॥ ४८ ॥

सं० टी०-अथ षष्ठस्थानवक्तव्यमाह-सैरिभी महिषी । रिपुभिः वैरिभिः सह संग्रामः । गौः वृषादिः । उष्ट्रः प्रसिद्धः । छेदभेदादि क्रूरकर्म । मातुलो मातुर्भ्रातृप्रश्नः । आतङ्कं भयशंकादि । सर्वेषां रिपुस्थानात्षष्ठस्थानाद्विलोकयेत् ॥ ४८ ॥

अर्थ-भैंस शत्रुओंसे युद्ध, गाय, ऊँट, क्रूरकर्म, मामा, भयसंदेह आदि सबोंका विचार छठे स्थानसे करना चाहिये ॥ ४८ ॥

वाणिज्यं व्यवहारं च विवादं च समं परैः ॥
गमागमकलत्राणि पश्येत् प्राज्ञः कलत्रतः ॥ ४९ ॥

सं० टी०-अथ सप्तमभवनवीक्षणमाह-वाणिज्यं क्रयविक्रयादिव्यवहारव्याजेन परेषां द्रव्यार्पणम्, अन्यैः परैः सह

"Aho Shrut Gyanam"

विवादं कलहादि, गमनागमनादि । कलत्रं स्त्रीकार्यम् । प्राज्ञः पण्डितः । कलत्रात्सप्तमभवनात्पश्येत् ॥ ४९ ॥

अर्थ–वाणिज्य अर्थात् क्रयविक्रय, व्यवहार अर्थात् व्याजपर द्रव्य लगाना, शत्रुओंके साथ विवाद, गमागम (परदेश जाना और आना), स्त्री इन सबोंको पंडितजन सप्तम भावसे देखें ॥ ४९ ॥

नद्युत्तारेऽध्ववैषम्ये दुर्गे शात्रवसंकटे ॥
नष्टे दष्टे रणे व्याधौ छिद्रे छिद्रं निरीक्षयेत्॥ ५०॥

सं० टी०–अथाष्टमभावनिरीक्षणमाह–नद्युत्तरणे, अध्वनो मार्गस्य कुशलादि तस्य वैषम्ये, जलस्थलोभयभेदात्त्रिविधो दुर्गस्तस्य भङ्गग्रहणादि, शात्रवसंकटे वैरिभिर्गृहीते बन्धमोक्षादि, नष्टे स्वयमेव गते वस्तुनि चोरगृहीते वा, दष्टे सर्पादिना, रणे संग्रामे, व्याधौ शारीरके, छिद्रे शाकिन्यादिदोषगृहीते; एतेषु छिद्रमष्टमस्थानं निरीक्षयेत् ॥ ५० ॥

अर्थ–नदीपार होनेमें, मार्गकी विषमतामें, दुर्ग (किलोंका) भंग या अपने वशमें करने आदिमें, शत्रुसम्बन्धी संकट अर्थात् शत्रुओंद्वारा बंधनादिको प्राप्त करने और छूटनेमें, द्रव्यादिके नष्ट अर्थात् चोरी आदि होनेमें, सर्पादिद्वारा काटे जानेमें, युद्धमें, व्याधिमें, छिद्र (शाकिनी आदि दोष) में पंडितजन अष्टम भावको देखें ॥ ५० ॥

"Aho Shrut Gyanam"

वापीकूपतडागादि प्रपादेवगृहाणि च ॥
दीक्षा यात्रा मठं धर्मं धर्मान्निश्चित्य कीर्तयेत्॥५१॥

सं०टी०-अथ नवमस्थाननिरीक्षणमाह-वापीकूपौ प्रसिद्धौ। तडाग आखातसरः। प्रपा जलपानस्थानं, देवगृहं, दीक्षा तपस्यारूपा। यात्रा तीर्थसेवा। मठं धर्मशालादि। धर्मं धर्मकार्यम्। धर्मान्नवमस्थानान्निश्चित्य कीर्तयेत्। परमत्रापि सबले गमनागमनराज्यलाभो वाच्यः॥ ५१ ॥

अर्थ-बावडी, कुँआ, पोखर आदिके निर्माण, प्याऊ, देवताओंके मंदिर आदि, मंत्रग्रहण तीर्थयात्रा, मठ अर्थात् धर्मशाला धर्मसम्बन्धी कार्य इन सबोंको नवम भावसे निश्चय करके कहे विशेष नवम भावसे गमनागमन और राज्यलाभका विचार भी किया जाता है॥ ५१ ॥

राज्यं मुद्रां पुरं पण्यं स्थानं पितृप्रयोजनम् ॥
वृष्ट्यादिव्योमवृत्तान्तं व्योमस्थानाद्विलोकयेत्॥५२॥

सं०टी०-अथ दशमस्थाननिरीक्षणमाह-राज्यं पट्टाभिषेकादि। मुद्रां राज्यव्यापाररूपाम्। पुरं नगरम्। पण्यं कार्यम्। स्थानं निवसनादिभावि। पितृकार्यं होमतर्पणादि। वृष्ट्यादि वर्षादिकं सर्वं व्योमवृत्तान्तं व्योमकार्यम् व्योम्नः दशमस्थानान्निश्चित्य कीर्तयेत्॥ ५२ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ–राज्य अर्थात् राजाओंकी राजगादी, राजमुद्रा आदिका निर्माण, पुर (नगर), पण्यकार्य, निवासस्थान, पितृसम्बन्धी कार्य, वर्षा आदि आकाशसम्बन्धी वृत्तान्त इन सबोंको दशम स्थानसे निश्चय करना चाहिये ॥ ५२ ॥

गजाश्वयानवस्त्राणि सस्यकाञ्चनकन्यकाः ॥
विद्वान्विद्यार्थयोर्लाभं लक्षयेल्लाभलग्नतः ॥ ५३ ॥

सं०टी०–अथैकादशस्थानविचारमाह–गजो हस्ती, अश्वः प्रसिद्धः, यानं सुखासनादि, वस्त्रं प्रसिद्धं, सस्यं धान्यं, काञ्चनं सुवर्णं, कन्यका, विद्या आकाशगमनेच्छादि, अर्थ-लाभो द्रव्यार्जनं, लाभलग्नतः एकादशस्थानात् एतत्सर्वं विद्वान् पण्डितो लक्षयेत् विचार्य कथयेत् ॥ ५३ ॥

अर्थ–हाथी, घोडा, पालकी आदि, वस्त्र, धान्य, सोना, कन्या, विद्या और धनका लाभ इन सबोंको विद्वान् ग्यारहवें भावसे देखे ॥ ५३ ॥

त्यागभोगविवाहेषु दानेष्टकृषिकर्मणि ॥
व्ययस्थानेषु सर्वेषु विद्धि विद्वन्व्ययं व्ययात् ५४

सं०टी०–अथ द्वादशस्थानविचारमाह–त्यागं भद्रादौ द्रव्यदानं, भोगः स्वार्थकुटुम्बाद्यर्थं च व्ययः । विवाहः प्रसिद्धः,

"Aho Shrut Gyanam"

दानं धर्मार्थं च व्ययम्। इष्टं वाञ्छितं, कृषिकर्म क्षेत्रादिकर्म, अन्यदपि व्ययकार्यं हे विद्वन् पण्डित ! व्ययात् द्वादशस्थानसंज्ञकाद्विद्धि जानीहि। इति द्वादशवेश्मसु वीक्षेत ॥ ५४ ॥ इति भावविचारद्वारं सप्तमम् ॥ ७ ॥

अर्थ–हे विद्वन् ! त्याग अर्थात् मांगलिक कर्ममें इनाम आदि देना, भोग अर्थात् कुटुम्बादिकोंके लिये धनका व्यय, विवाह, दान, वांछित कार्य, खेती कर्म और अन्य भी खर्च करनेके कामोंमें बारहवें भावसे व्यय (खर्च) को जानो ॥ ५४ ॥

इति भावविचारद्वारम् ॥ ७ ॥

भागं वारिधिवारिराशिशशिषु(१४४) प्राहुर्मृगाद्ये बुधाः षट्के बाणकृपीटयोनिविधुषु (१३५)स्यात् कर्कटाद्ये पुनः॥ पादैः सप्तभि (७)रन्वितैः प्रथमकं मुक्त्वा दिनाद्ये दले हित्वैकां घटिकां परे च सततं दत्त्वेष्टकालं वदेत् ॥ ५५ ॥

सं॰टी॰–अथेष्टघटीज्ञानद्वारमाह–भागं प्राहुः कथयन्ति बुधाः कालज्ञाः। केषु वारिधिवारिराशिशशिषु, अङ्कानां

"Aho Shrut Gyanam"

वामतो गतिः १४४ एवंरूपेषु ध्रुवांकेषु । कस्मिन्काले इत्याह-मृगादिषट्के यदा मकरसंक्रान्तौ सूर्यः समायाति तस्मिन् दिवसे अयं ध्रुवाङ्कः । तथा कर्कटाद्ये षट्के च पुनः बाणः कृपीटयोनिः वह्निः, विधुश्चन्द्रः । अत्रापि प्राग्वत् १३९ एवं ध्रुवाङ्केषु भागं प्राहुरित्यर्थः मकरसंक्रांतिदिनं समारभ्य मिथुनांत्यदिनं यावत् १४४ तावदयं ध्रुवांकः । तथा कर्क-संक्रांतिदिनं समारभ्य धनुरंत्यदिनं यावत् १३९ तावत् अयं ध्रुवांकः । कैर्भागं प्राहुरित्याह—पादैरिति । चरणक्रमेण मापितच्छायापादैः अन्यैश्च सप्तपादान्वितैः । परन्तु मापित-पादानां मध्ये एकः पादो न्यूनः क्रियते प्रथमदले प्रथम-मध्याह्नं यावत् एकां घटीम् ऊनां च कृत्वा तथा द्वितीये अपराह्णदले च एकां घटीं दत्त्वा गताङ्कानुसारेण इष्टकालं वदेत् । दैवज्ञ इत्यर्थः । आम्नायो गुरुगम्यः । पाठान्तरेणे-ष्टकालमाह । " छायापादै रसोपेतैरेकाविंशशतं भजेत् । लब्धांके घटिका ज्ञेया एवं शेषे पलानि च ॥"इति । अन्यच्च"छायापादा इति मुनि ७ संयुज्यान्नंदा ९ ष्ट ८ बाहु २ ध्रुवराशिलब्धे । २८९ नयनविह्वलं द्वाभ्यां हीनं दलीकरणं तस्माच्छेषम् ॥ अर्धं दलीक्रियते दिवसो गम्यते इत्यादि ॥ ५९ ॥ इतीष्टघटी-ज्ञानद्वारमष्टमम् ॥ ८ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ-अब अष्टम द्वारमें इष्टघटी साधनके प्रकार कहते हैं-कि, दिनमें जिस समय इष्टघटी जाननी हो, उसी समय अपने शरीरकी छायाको अपने पाँवसे मापे, परन्तु जहां खडा हो उस पाँवको छोडके जो संख्या हो उसमें सात और मिलाकर भाजक कल्पना करे । अब इसी भाजकसे मकरादिसे मिथुनान्त पर्यन्त अर्थात् सौम्यायन जबतक रवि रहे तबतक एकसौ चौवालिस १४४ में भाग दे, और कर्कादि छः राशियोंमें रवि हो तो एकसौ पैंतीस १३५ में भाग दे जो लब्ध हो, उसमें दोपहरसे पहिलेकी इष्टघटी हो तो एक घटा देनेसे और दिनार्धसे ऊर्ध्व हो तो एक जोड देनेसे इष्टघटी होती है ॥ ५५ ॥

इतीष्टघटीज्ञानद्वारम् ॥ ८ ॥

इन्दुः सर्वत्र बीजाभो लग्नं तु कुसुमप्रभम् ॥
फलेन सदृशोऽंशश्च भावः स्वादुसमः स्मृतः॥५६॥

सं० टी०-अथ लग्नविचारद्वारम्-सर्वकार्येषु अतीतानागतवर्तमानरूपेषु चन्द्रमाः बीजतुल्यः, कोऽर्थः-यस्मिन् लग्ने वा स्थाने वा चन्द्रमा भवति तत्र विचारणीयम् । यत्र लग्नस्य बीजं यावन्तो विंशोपकाः लग्नं पश्यति चन्द्रस्तावद्विंशोपका लग्ने बीजमिति भावः । अर्थाच्चन्द्रबले सति बीजबलमित्यर्थः । तथा वर्तमानं विचार्य लग्नं कार्यलतायाः कुसुमतुल्यं, यादृशं

"Aho Shrut Gyanam"

लग्नं स्वामियुतं दृष्टं वा तादृशं कार्यं फलस्य पुष्पमित्यर्थः तथा, यादृशो लग्ननवांशकस्तादृशं तत्तुल्यं फलं विचार्य तथा लग्नस्य यादृशो भावः क्रूराक्रूरचरास्थिरास्तोदितादि तादृशः स्यादुरिति स्वबुद्ध्या स्वयमेवाप्यूह्यमिति । अथात्रैः लग्नाधिकारे प्रच्छकः सत्यतया प्रष्टुमागत इति ज्ञानार्थं शास्त्रा न्तराणां श्लोकत्रयेण विशेषं दर्शयति–" लग्ने चन्द्रशनी कुंभे रविः सौम्यो विरश्मिकः । कौटिल्येनागतः प्रश्ने विज्ञा येवं ततो वदेत् ॥ १ ॥ " अस्यार्थः–पृच्छालग्ने यदि चन्द्र शनी स्यातां, तथा कुंभे रविः, बुधोऽस्तमितश्च तदा ज्ञेयमयं प्रच्छकः कपटतया आगतोऽस्ति । अन्यथा सत्यतयेति ज्ञात्वाऽग्रे विचारणीयम् । विचारणीयमेवाह–" रवौ सार्द्धत्रयो भागाः पंच चन्द्रे गुरौ त्रयम् । द्वौ शुक्रे द्वौ बुधे चैव लग्नविंशोपकाः स्मृताः ॥ २ ॥ मंदे भौमे तथा राहौ प्रत्येकं सार्द्धमिष्यते । दुर्बलं बलवल्लग्नं विज्ञेयं ज्ञानवेदिभिः ॥३॥ " अनयोरर्थः–रवौ लग्नस्थे उच्चस्थे वा सार्द्धत्रिभागाविंशोपकं लग्नं बलवद् भवति । रवौ नीचस्थे पश्यति सार्द्धत्रयो भागा लग्नमबलमिति सर्वग्रहानुसारेण बलाबलभावो विचार्यः । एवं चन्द्रे लग्नस्थे पश्यति वा पञ्च विंशोपकाः एवं गुरौ लग्ने त्रयो विंशोपकाः तथा शुक्रे बुधे च लग्नस्थे बलवति लग्नं पश्यति सति द्वौ द्वौ

"Aho Shrut Gyanam"

विंशोपकौ लग्नबलाबलम् । तथा शनौ राहौ मंगले बलवति लग्नं पश्यति प्रत्येकं सार्धं विंशोपकबलं ज्ञेयम् । यावतां ग्रहाणां लग्ने स्थितिर्वा लग्नं पश्यंति तावन्तो विंशोपकाः लग्नबल ज्ञेयम् इति भावार्थः ॥ ५६ ॥

अर्थ-अब नवम द्वारमें लग्नका विचार लिखते हैं-तहाँ चन्द्रादिकोंको बीजादि रूपसे वर्णन-समस्त कार्योंमें अर्थात् भूत, भविष्य, वर्तमान सम्बन्धी सभी कार्योंमें चन्द्रमा बीजसदृश है, लग्न पुष्पके सदृश है, नवमांश फलके सदृश है और द्वादशभाव उस फलका स्वादुसदृश कहा गया है। तात्पर्य यह है कि, चन्द्रमा जितने विंशोपकसे लग्नको देखे उतने ही लग्नमें बीज जानना अर्थात् चन्द्रमा बलिष्ठ होनेसे कार्यका बीज बलिष्ठ जानना। इसी प्रकार लग्न बलिष्ठ हो तो कार्यका पुष्प, नवमांश बलिष्ठ हो तो फल और भाव बलिष्ठ हो तो कार्यका स्वाद जाने ॥ ५६ ॥

उदितं चिन्तयेद्भावं भावि भूतं च चिन्तयेत् ॥
कार्यभावेन योगं च कार्यभावस्थितं ग्रहम् ॥५७॥

सं०-टी०-अथातीतानागतवर्तमानलग्नस्वरूपमाह-यदा यस्य लग्नस्योदयो भवति, तदा तस्य लग्नस्योदितो भावो ज्ञातव्यः। मीने मेषे त्रिघटिकाः ३ । वृषकुंभौ ४ । मिथुनमकरौ ५ । कर्कसिंहकन्यातुलावृश्चिकधनुषां घट्यः ६ । इति

"Aho Shrut Gyanam"

द्वादशराशीनां लग्नस्य त्रिभागः कर्तव्यः । तस्य त्रिभागस्य भावलग्नमुदितं चिन्तयेत् विचारयेत् । विचारयेदित्यन्वये भावो ज्ञातव्यः । तथा यो गतः सोऽतीतो ज्ञेयः। अतीतो गतः तथा य एष्यति स भावी, एवं लग्नस्य वर्तमानस्यातीतानागत- भावं विचार्य कार्यस्यापि अतीतानागतवर्तमानत्वं चिन्तनी- यम्, भावानुसारेण लग्नबलाबले चिंत्ये । प्रश्ने कार्यस्थाने ग्रहं चिंतयेत् इति भावः । " राहुभौमांतरे चन्द्रः स्यात्तदा चन्द्रकर्तरी । शनिरांह्वतरे सूर्यो हायने सूर्यकर्तरी ॥ सौम्या- सौम्याश्च मिश्रा वा पृच्छायां यतमे गृहे । तावत्याब्दफलं तादृग् वाच्यं जन्मगृहैरपि "॥ ५७ ॥

अर्थ-अब भूत भविष्य और वर्त्तमान लग्नका स्वरूप कहते हैं— तहाँ लग्नभोग प्रमाण यथा—मेष और मीनकी तीन घटी भोग होता है, वृष और कुम्भकी चार घटी, मिथुन और मकरकी पाँच घटी और शेष (कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन) की छः घटी भोग हैं, फिर बारहों राशिके बीचमें लग्नके तीन भाग करके प्रथम उदित लग्न भावको विचारे, फिर भूत और भविष्यत् भाव विचार कर कार्यका भी भूत भविष्यत् वर्त्तमान० जाने तथा जिस भाव- सम्बन्धी कार्य हो उस भावद्वारा योग विचारे और कार्यभावस्थित ग्रहको भी विचारे ॥ ५७ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

उदितस्यादौ भावस्याधिपतिं चिन्तयेत्प्रयत्नेन ॥
तदनु च नाथो यस्मिन्नासीद्भावे विचार्यं तत् ५८॥

सं०टी०-अथोदितस्य लग्नस्याधिपतिस्वरूपमाह-आदौ प्रथमे उदितस्य लग्नस्याधिपतिः उदितोऽस्तो नीच उच्चो वेति विचारणीयः। ततोऽनंतरं यस्मिन् स्थाने स लग्नपतिर्भवति यस्यां वाऽवस्थायामासीत्तत्स्थानं विचार्यम्। "स्वामित्र १ नीचगो २ वक्रः ३ स्वराशिस्थो ४ ऽरिवर्गगः ५। लग्नाद्द्वाद-शगः ६ षष्ठः ७ क्रूरयुक्तो ८ ऽथ वीक्षितः ९॥ याम्यो १० राहोस्तु पुच्छस्य ११ बालो १२ वृद्धो १३ ऽस्तगो १४जितः। मुंथशीलो मुशारिफे पापैरित्यबलो ग्रहः॥" इति दोष-विवर्जितः॥ ५८॥

अर्थ-प्रथम उदित भावस्वामीको यत्नपूर्वक विचारे अर्थात् उदित-भाव स्वामीका उदित, अस्त, नीचगत, उच्चगत, वक्र शत्रुस्थानगत इत्यादि शुभाशुभ स्थानको विचारे, फिर लग्नस्वामी जिस स्थानमें हो और जिस अवस्था आदिमें हो उसको विचारे॥ ५८॥

भावोऽथ कार्यरूपो यस्तदधिपलग्नाधिपौ चिन्त्यौ।
वीक्षणयोगौ भावाधिष्ठातारौ पुनश्चिन्त्यौ॥५९॥

"Aho Shrut Gyanam"

सं० टी०–पृच्छालग्नाधिपोऽपि कीदृश इत्याह–भावः लग्न भावः, पृच्छायां कार्यरूपः कार्यभावः चिन्त्यौ चिंतनीयौ तदनंतरं लग्नाधिपतिकार्याधिपत्योः परस्परं स्वामिभावौ चिंतनीयौ । तयोर्मिथो दृष्टिश्चेति तदेव स्पष्टयति ॥ ५९ ॥

अर्थ–अब प्रश्नलग्नाधिपतिका विचार लिखते हैं–जिस भावसम्बन्धी कार्य है उस भावको तथा उस भावका स्वामी और लग्नस्वामी इन दोनोंकी परस्पर दृष्टि आदि सम्बन्ध विचारना चाहिये ॥ ५९ ॥

लग्नपतिर्यदि लग्नं कार्याधिपतिश्च वीक्षते कार्यम्॥
लग्नाधीशः कार्यं कार्येशः पश्यति विलग्नम्॥६०॥
लग्नेशः कार्येशं विलोकते विलग्नपं तु कार्येशः ॥
शीतगुदृष्टौ सत्यां परिपूर्णा कार्यनिष्पत्तिः॥६१॥

सं० टी०–लग्नपतिर्यदि लग्नं पश्यति, तथा कार्याधिपश्च कार्यं पश्यति, अथवा लग्नाधीशः कार्यं पश्यति, कार्येशः विलग्नं पश्यति इति चतुर्भागिलग्नेशाः ॥ ६० ॥ तथा लग्नाधिपतिः कार्याधिपतिं पश्यति, स्वस्थानस्थः सन् शीतगुः पश्यति तथा कार्याधिपतिर्यदि स्वस्थानस्थ एव लग्नाधिपतिं विलोकते, तयोरेवं दृष्टिसद्भावेऽपि यदि तत्र चन्द्रदृष्टिः पूर्णा तदा पूर्णकार्यसिद्धिर्ज्ञेया इति भावः ॥ ६१ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ—यदि लग्नका स्वामी लग्नको और कार्यभावस्वामी कार्य भावको देखें, अथवा लग्नस्वामी कार्यभावको और कार्येश लग्नको देखें तथा लग्नेश कार्येशको और कार्येश लग्नेशको देखें तथा इनपर चन्द्रमाकी दृष्टि भी हो तो पूर्णरीतिसे कार्यसिद्धि कहनी ॥६०॥६१॥

दशमतृतीये नवपञ्चमे चतुर्थाष्टमे कलत्रं च ।
पश्यन्ति पादवृद्ध्या फलानि चैवं प्रयच्छन्ति ॥
पूर्णं पश्यति रविजस्तृतीयदशमे त्रिकोणमपि जीवः ।
चतुरस्रं भूमिसुतः सितार्कबुधहिमकराः कलत्रं च॥

सं० टी०—अथ प्रस्तावान्नवग्रहाणां परस्परदृष्टिस्वरूपं शास्त्रांतरादाह—दशमतृतीयेति । यो ग्रहो यत्र भवति तदारभ्य लग्नं यावत्कार्यं च, यद्वा तत्र दशमे १० तृतीये ३ स्थाने वर्तमानं ग्रहं च पञ्च ५ विंशोपकान् पश्यति । नवमे पञ्चमे ९ । ५ वा स्थितं दशविंशोपकान्पश्यति । तथा चतुर्था ४ ष्टमे ८ पञ्चदश १५ विंशोपकान्पश्यति । कलत्रं सप्तमे स्थाने वर्तमानं ग्रहं विंशति २० विंशोपकान्पश्यति । तथात्रिधा यत्संख्या विंशोपकास्तन्मानं फलं वदति । ग्रहाः सर्वे एवं फलानि पादवृद्ध्या प्रयच्छंति । एतदेव पुनर्विशेषमाह—' पूर्णं पश्यति ' इति । पूर्वस्मिन् श्लोके दशमतृतीये स्थाने वर्तमानं ग्रहादिकं रविसुतः शनिः पूर्णं पश्यति विंशतिविंशोपकान् पश्यतीति विशेषो ज्ञेयः । तथा नवपञ्चमे जीवो बृहस्पतिर्वर्तमानं विंशो-

"Aho Shrut Gyanam"

पकान्, चतुर्थाष्टमं स्थानमाश्रितं भूमिसुतो मंगलः पूर्णं पश्यति । सितः शुक्रः, अर्कः सूर्यः, बुधः, हिमकरश्चन्द्रः एते चत्वारोऽपि ग्रहाः कलत्रं सप्तमस्थानं संपूर्णं पश्यंति इति श्लोकस्य ताजिकस्थस्य अर्थः । यदैकादशस्थाने वर्तमानाः सर्वे ग्रहाः पूर्णं पश्यंति । सर्वेऽप्युपांते शुभा इत्युक्तत्वात् । "ज्ञार्केन्दुशुक्रास्त्रिदश ३ । १० त्रिकोणं ९ । ५ चतुर्थाष्टमं ४ । ८ द्यून ७ मथांशवृद्ध्या । पश्यंति सूर्यात्मजपूज्यभौमाः क्रमेण संपूर्णदृशो भवन्ति ॥" पुनः—"त्र्याशं शनिर्देवगुरुस्त्रिकोणं तुर्याष्टमं भूमिसुतः प्रपूर्णम् ॥ ज्ञार्केन्दुशुक्राः क्रमपादवृद्ध्या पश्यन्ति चास्तं सकलाः प्रपूर्णम् ॥" अनयोरर्थः प्राग्वदेव ॥ ६२ ॥

अर्थ—ग्रहोंकी दृष्टि कहते हैं—शनैश्वर, तृतीय और दशमको पूर्ण दृष्टिसे देखता है; बृहस्पति पञ्चम और नवमको पूर्ण दृष्टिसे देखता है, मंगल चतुर्थ और अष्टमको पूर्णदृष्टिसे देखता है, तथा रवि, बुध और चन्द्रमा सप्तमको पूर्णदृष्टिसे देखते हैं और चकारसे पूर्व कहे ग्रह भी सप्तमको पूर्ण देखते हैं । पादादि दृष्टि आचार्य नहीं कहे तथापि पूर्व पच्चीसवें श्लोककी टीका और चक्र देखकर ज्ञात कर लेना ॥ ६२ ॥

कथयन्ति पादयोगंपश्यातिसौम्योनलग्नपोलग्नम् ।
लग्नाधिपश्च पश्यति शुभग्रहो नार्धयोगं च ॥६३

"Aho Shrut Gyanam"

सं०टी०-अथ लग्नपत्यादिदृष्टिविशेषमाह-सौम्यः शुभग्रहो लग्नं पश्यति स लग्नाधिपो न पश्याति तदा पादयोगं कथयंति । कोऽर्थः-पञ्च ५ विंशोपका कार्यसिद्धिर्भवति । तथा शुभग्रहो लग्नं न पश्याति, लग्नाधिपः पश्यति तदाऽधर्ययोगम् । कोऽर्थः दशविंशोपका कार्यसिद्धिः ॥ ६३ ॥

अर्थ-दृष्टिपरसे फल कहते हैं-यदि शुभग्रह लग्नको देखता हो और लग्नका स्वामी लग्नको न देखे तो पादयोग अर्थात् चतुर्थांश ५ विंशोपक कार्यसिद्धि जाननी तथा लग्नस्वामी लग्नको देखता हो और शुभग्रह नहीं देखे तो अर्धयोग अर्थात् आधा १० विंशोपक कायसिद्धि जाननी ॥ ६३ ॥

एकःशुभग्रहो यदि पश्यतिलग्नाधिपो विलोकयाति।
पादोनयोगमाहुस्तदा बुधाःकार्यसंसिद्धयै ॥ ६४॥

सं० टी०-लग्नपतिर्लग्नं पश्याति अपरोऽपि यदि सौम्यग्रहः कोऽपि पश्यति तदा पादोनयोगमाहुः कथयंति बुधाः । कार्यसिद्धिविषयकोऽभिप्रायःपञ्चदशविंशोपकाकार्यसिद्धिरिति ॥ ६४॥

अर्थ-यदि कोई एक शुभग्रह और लग्नका स्वामी ये दोनों लग्नको देखें तो कार्यकी सिद्धिके लिये चतुर्थांशोन योग पण्डितोंने कहे हैं अर्थात् कार्यसिद्धिकारक पन्द्रह विंशोपक होता है ॥ ६४ ॥

 "Aho Shrut Gyanam"

लग्नपतिदर्शने सति शुभग्रहौ द्वौ त्रयोऽथवा लग्नम्
पश्यन्ति यदि तदानीमाहुर्योगं त्रिभागोनम्॥६५॥

सं० टी०–लग्नपतिदर्शने सति यदि अन्यौ द्वौ त्रयो वा शुभग्रहा लग्नं पश्यंति तदानीं त्रिभागोनयोगमाहुः । त्रिभिर्भागैर्न्यूनं योगं सप्तदशविंशोपका कार्यसिद्धिरिति ॥ ६५ ॥

अर्थ–लग्नके ऊपर लग्नस्वामीकी दृष्टि होनेपर अन्य दो शुभग्रह अथवा तीन शुभग्रह यदि लग्नको देखें तो तीन अंश कमती योग कहा गया है अर्थात् सत्तरह विंशोपक कार्यसिद्धिकारक होते हैं ॥६५॥

क्रूरावेक्षणवर्जाश्चत्वारः सौम्यखेचरा लग्नम् ॥
लग्नेशदर्शने सति पश्यंति पूर्णयोगकराः ॥ ६६ ॥

सं० टी०–क्रूराणां ग्रहाणामवेक्षणं दर्शनं तेन वर्ज्याः चत्वारः तेऽपि सौम्यग्रहाः लग्नं पश्यंति लग्नाधिपतेर्दर्शने सति संपूर्णयोगकराः । विंशतिविंशोपका कार्यसिद्धिरिति ॥ ६६ ॥

इति लग्नविचारद्वारं नवमम् ॥ ९ ॥

अर्थ–पापग्रहोंकी दृष्टिसे वर्जित होकर चारों शुभग्रह (पूर्णचन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र) लग्नको देखते हों और लग्नके ऊपर लग्नेशकी भी दृष्टि होवे तो पूर्णयोगकारक होते हैं अर्थात् कार्यसिद्धिके लिये बीस विंशोपक बल होता है ॥ ६६ ॥

इति लग्नविचारद्वारम् ॥ ९ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

क्रूराक्रांतः क्रूरयुतः क्रूरदृष्टस्तु यो ग्रहः ॥
विरश्मितां प्रपन्नश्च स विनष्टो बुधैः स्मृतः॥६७॥

सं० टी०-अथ विनष्टग्रहविचारद्वारमाह-क्रूराक्रांतः इति । क्रूरेणाक्रांतः पीडितः, क्रूरेण च युक्तः सहितः, क्रूरेण दृष्टः पूर्णदृष्टचा, विरश्मितां प्रपन्नः अस्तंगत एवंभूतो यो ग्रहो भवति स चतुःप्रकारेण विनष्ट एवोच्यते ॥ ६७ ॥

अर्थ-अब दशवें द्वारमें विनष्टग्रहोंके लक्षण और विचार लिखते हैं पापग्रहोंसे आक्रान्त (पीडित) और पापग्रहोंसे युक्त तथा पापग्रहोंसे दृष्ट जो ग्रह और सूर्यसान्निध्यसे नष्ट होगया है किरण जिसका ऐसे जो ग्रह सो पण्डितोंसे विनष्ट कहे गये हैं अर्थात् पापयुक्त, पापदृष्ट-पापपीडित, और अस्त ये चार प्रकारसे ग्रह विनष्ट कहे जाते हैं॥ ६७॥

क्रूरेण जीयमानो यो राहुपार्श्वे यथा रविः ॥
क्रूराक्रांतः स विज्ञेयः क्रूरयुक्तः समेंऽशके ॥ ६८ ॥

सं० टी०-क्रूरेण आक्रांत आच्छादितः यो ग्रहः क्रूरेण पराजीयमानो भवति स क्रूराक्रांतो विज्ञेयः विज्ञातव्यः । दृष्टांतमाह-राहोः पार्श्वे यथा रविः राहुणा हि रविर्जीयते यस्मिन्नंशे ग्रहो भवति तस्मिन्नवांशे राशिभागे यदि क्रूरो भवति तदा क्रूरयुक्त उच्यते एकांशे स्थितत्वात् ॥६८॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ—पूर्वश्लोकमें क्रूराक्रान्त (पापपीडित) जो कहा है, उसको दृष्टांत सहित दिखाते हैं—पापग्रहोंके साथ युद्धमें हारा हुआ ग्रहको क्रूराक्रान्त (पापपीडित) जानना, जैसे राहुके समीप सूर्य अर्थात् जैसे राहुके साथ सूर्य नष्टकिरण होते हैं, वैसेही पापग्रहोंसे पराजित ग्रह विनष्ट होजाता है ॥ ६८ ॥

पूर्णया दृश्यते दृष्ट्या क्रूरदृष्टः स उच्यते ॥
प्रविविक्षुः प्रविष्टो वा सूर्यराशौ विरश्मिकः॥६९॥

सं० टी०—पूर्णयेति । यो ग्रहः क्रूरग्रहेण संपूर्णदृष्ट्या दृश्यते स क्रूरदृष्ट उच्यते तथा सूर्यमंडले प्रवेष्टुकामः प्रविष्टो वा भवति यो ग्रहः सोऽस्तत्वाद्विरश्मिक उच्यते ॥ ६९ ॥

अर्थ—जो ग्रह पापग्रहोंकी पूर्णदृष्टिसे देखा जाता हो सो क्रूरदृष्ट कहाजाता है और सूर्य जिस राशिके हों उसराशिमें जानेवाला या उसमें प्रविष्ट जो ग्रह सो विरश्मि (अस्त) कहाजाता है ॥ ६९ ॥

लग्नाधिपे विनष्टे स्याद्विनष्टावयवः पुमान् ॥
विनष्टजातिवर्णश्च शुभाकारो विपर्यये ॥ ७० ॥

सं० टी०—अथ विनष्टग्रहबलम् । लग्नाधिपे इति । लग्नाधिपे यदि चतुःप्रकाराणां प्रागुक्तानां मध्ये अन्यतरप्रकारेण विनष्टो भवति तदा प्रच्छकस्य शरीरं विनष्टं वाच्यम् । जन्मकाले व

"Aho Shrut Gyanam"

तथा ग्रहवर्णजातित्वाद्यनुसारेण विनष्टं वर्णजात्यादिकं प्रच्छकस्य वाच्यम् । अस्माद्विपर्यये लग्नाधिपतावविनष्टे सति शुभाकारः अविनष्टत्वं प्रच्छकस्य शरीरादौ वाच्यमिति भावार्थः ॥ ७० ॥

अर्थ–अब विनष्टादि ग्रहके वशसे द्वादशभावोंका फलादेश लिखते हैं–चौरादिक प्रश्नकालमें अथवा जन्मकालमें यदि पूर्वकथित चारप्रकारोंमेंसे किसी प्रकारसे लग्नाधिप विनिष्ट हो तो वह पुरुष वर्ण तथा जाति आदिसे विनष्ट होता है अर्थात् जन्मकालमें लग्नाधिप विनष्ट हो तो जन्मनेवाला मनुष्य विनष्टावयव (कुरूप) होता है और चौरादि सम्बन्धी प्रश्नमें भी चौरादिकोंकी जाति और वर्ण विनष्ट कहना और यदि विपर्यय हो अर्थात् लग्नाधिप पुष्ट हो तथा शुभ स्थानमें स्थित हो तो पूर्व कथित मनुष्योंका आकार शुभ (उत्तम) जानना ॥ ७० ॥

एवं धनादिस्थानेषु विनष्टेऽधिपतौ वदेत् ॥
धनभावभ्रातृभावप्रमुखान् प्रत्ययान् सुधीः ७१॥

सं० टी०–एवं धनादीति । एवं पूर्वोक्तप्रकारेण धनसहजादिस्थानेष्वपि यस्य भावस्याधिपतिर्विनष्टो भवति तस्य तस्य कार्यस्य हानिर्भवति ॥ ७१ ॥ इति विनष्टग्रहविचारद्वारं दशमम् ॥ १० ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ—इसी प्रकार धनादि स्थानोंमेंसे जिन २ स्थानोंका स्वामी विनष्ट हो उसका भी फल पण्डित कहें अर्थात् धनभावमें धनसम्बन्धी, तृतीयसे भ्रातृसम्बन्धी इत्यादि सभी भावोंका फल विचारकर कहें ॥ ७१ ॥

इति विनष्टग्रहविचारद्वारम् ॥ १० ॥

आद्यो लग्नपतिः कार्ये लग्ने कार्याधिपो यदि ॥
द्वितीयो लग्नपो लग्ने कार्ये कार्याधिपो भवेत् ॥७२
लग्नपः कार्यपश्चापि लग्ने यदि तृतीयकः ॥
चतुर्थः कार्यगौ स्यातां यदि लग्नपकार्यपौ ॥७३॥
चतुर्षु तूभयत्रापि चन्द्रदृग्दर्शनं मिथः ॥
कार्यसिद्धिस्तदा ज्ञेया मित्रे चेदाधिकं शुभम् ॥७४

सं०टी०—अथ राजयोगद्वारमाह—आद्य इति । लग्नपतिः कार्ये, कार्याधिपश्च लग्ने भवति तदा अयं प्रथमो राजयोगः । तथा लग्नस्वामी लग्ने, कार्यस्वामी च कार्ये भवति तदा द्वितीयो राजयोगः ॥ ७२ ॥ यदि लग्नाधिपतिः कार्याधिपतिश्च लग्ने स्यातां तदा तृतीयो राजयोगः । तथा यदि लग्नपकार्याधिपौ

"Aho Shrut Gyanam"

कार्ये स्यातां तदा चतुर्थो राजयोगः ॥ ७३ ॥ अथ राजयोगे कार्यसिद्धिमाह–चतुर्ष्विति । परं चतुर्ष्वपि राजयोगेषु सत्सु लग्नपतिकार्याधिपतियोगविषये चन्द्रदृष्टिर्भवति, चन्द्रस्य विषये चानयोरेव मिथो दर्शनं यदि चन्द्रो मित्रक्षेत्रे भवति तदा वक्तव्यमधिकं किंचिच्छुभं भविष्यतीति ॥ ७४ ॥

अथ–अब एकादशद्वारमें राजयोग अर्थात् प्रधान योग कहते हैं–जिस भावसम्बन्धी विषयका विचार करना हो उस भावका स्वामी कार्येश कहाता है और लग्नका स्वामी लग्नेश कहाता है। यहाँ लग्नेश और कार्येशपरसे चार योग कार्यसिद्धिदायक तीन श्लोकोंसे कहते हैं–कि लग्नका स्वामी कार्यभावमें अर्थात् जिस भावसम्बन्धी प्रश्न हो उस भावमें हो और कार्येश लग्नमें हो तो यह पहला योग भया। और यदि लग्नका स्वामी लग्नहीमें हो और कार्यभावका स्वामी कार्य भावमें हो तो यह द्वितीय योग हुवा और यदि लग्नस्वामी तथा कार्यभावस्वामी दोनोंही लग्नमें हों तो यह तीसरा योग हुवा और यदि लग्नेश और कार्येश दोनों कार्यभावमें हों तो चौथा योग हुवा, इन चारों योगोंमें लग्नेश और कार्येश इन दोनोंपर चन्द्रमाकी दृष्टि हो और चन्द्रमाको भी लग्नेश कार्येश देखे तो कार्यकी सिद्धि जाननी चाहिये और यदि चन्द्रमा मित्रक्षेत्रमें हो तो और भी अधिक शुभ जानना ॥ ७२–७४ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

चन्द्रदृष्टिं विनाऽन्यस्य शुभस्य यदि दृग्भवेत् ॥
शुभं प्रयोजनं किंचिदन्यदुत्पद्यते तदा ॥ ७५ ॥

सं० टी०–चन्द्रदृष्टिमिति । चन्द्रो लग्नपतिं न पश्यति परम् अन्यः कोपि सौम्यग्रहो लग्नं कार्यं वा पश्यति तदा वक्तव्यं प्रारब्धस्य कार्यस्य सिद्धिमध्येऽन्यत् प्रयोजनांतरं नवीनं भवतीति वाच्यम् ॥ ७५ ॥

अर्थ–पूर्व तीन श्लोकोंसे कहे हुए चारों योगोंमें यदि लग्नेश कार्येशके ऊपर चन्द्रमाकी दृष्टि न हो और अन्य किसी शुभग्रहकी दृष्टि हो तो प्रश्नसम्बन्धी कार्यसे भिन्न नवीन कोई शुभ प्रयोजन उत्पन्न हो ॥ ७५ ॥

राजयोगा अमी ख्याताश्चत्वारोऽपि महाबलाः ॥
अत्रैव दृष्टियोगेन सामान्येन फलं स्मृतम् ॥ ७६ ॥

सं० टी०–अमी चत्वारोऽपि राजयोगाः प्रसिद्धाः बलवन्तश्च अतीव । अत्रैव राजयोगे चन्द्रादिदृष्टिसद्भावे सति सामान्येनैव फलं भवेत् इति भावः ॥ ७६ ॥

अर्थ–पूर्व कहे हुये चारों योग महाबलिष्ठ राजयोग विख्यात हैं इन्हीं चारों योगोंमें दृष्टियोगके साम्यसे फल कहा गया है अर्थात् शुभग्रहादिक दृष्टियोगसे शुभ, अशुभग्रहादिक दृष्टियोगसे अशुभ फल कहा गया है ॥ ७६ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्द्धयोगो विनिर्दिष्टः परस्परदृशं विना ॥
चन्द्रदृष्टिं विना ज्ञेयं शुभं पादफलं बुधैः ॥७७॥

सं० टी०-यदि चतुर्णां राजयोगानां मध्ये एकोऽपि स्यात्, परं लग्नाधिपतिकार्याधिपयोः परस्परम् अदर्शनं स्यात् तदा अर्ध १० विंशोपका कार्यसिद्धिः । तथा तयोर्लग्नपकार्यपयोः परस्परं चन्द्रदृष्टिर्न स्यात् तदा बुधैः शुभं पादफलं पञ्चविंशोपका कार्यसिद्धिर्ज्ञेया ॥ ७७ ॥

अर्थ-इन चारों योगोंमेंसे किसी योगमें यदि लग्नका स्वामी और कार्यभावस्वामीकी परस्पर दृष्टि नहीं हो तो वह अर्धयोग (आधाफल देनेवाला) १० विंशोपक होता है और यदि लग्नस्वामी तथा कार्यभावस्वामीके ऊपर चन्द्रमाकी दृष्टि नहीं हो तो चतुर्थांश शुभफल (पांच विंशोपक) पण्डितोंसे जानने योग्य है ॥ ७७ ॥

परस्परं विषमता चन्द्रयोगो भवेद्यदि ॥
तदाऽर्धफलमादिष्टं प्रपञ्चोऽयं मतो मम ॥७८॥

सं० टी०-यदि लग्नपकार्यपयोः परस्परं दृष्टिर्न स्यात् परं चंद्रदृष्टिस्तयोर्विषये भवति तदाऽप्यर्धफलं दशविंशोपका कार्यसिद्धिः । अयं प्रपञ्चः राजयोगफलविस्तारो मतः कथितः, मम मतः परस्मिन् शास्त्रांतरे इति भावः । इति राजयोगद्वारमेकादशम् ॥ ७८ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ–लग्नस्वामी और कार्यभावस्वामी इन दोनोंकी विषमता अर्थात् शत्रुता हो और यदि चन्द्रयोग अर्थात् चन्द्रमासे युक्त हो तो आधाफल कहा गया है, यह जो चारों योगोंका प्रपञ्च सो हमारा सम्मत है ॥ ७८ ॥

इति राजयोगद्वारम् ॥ ११ ॥

लग्नेशो वीक्षते लग्नं कार्येशः कार्यमीक्षते ॥
कार्यसिद्धिर्भवेदिंदुः कार्यमेति परं यदा ॥ ७९ ॥

सं० टी०–अथ लाभालाभविचारद्वारमाह–लग्नपतिर्लग्नं पश्यति तथा कार्येशः कार्यं पश्यति परं कार्यसिद्धिस्तदा तस्मिन्नेव काले स्यात्, चंद्रः कार्यस्थानं समायाति तावत्कार्ये विलंब एवेति भावः ॥ ७९ ॥

अर्थ–अब बारहवें द्वारमें लाभालाभविचार लिखते हैं–लग्नेश लग्नको देखता हो और कार्येश (जिस भावसम्बन्धी कार्य हो, उस भावका स्वामी) उसी भावको देखता हो तो कार्यसिद्धि होगी, ऐसा कहना । परन्तु कब होगी, इसके लिये यह विचार है कि, जब चन्द्रमा कार्यभावपर आवेगा, तब कार्यसिद्धि होगी ॥ ७९ ॥

लग्नाधिपतिर्लुब्धो लाभाधीशश्च दायको भवति ॥
लग्नाधिपस्य योगो लाभाधीशेन लाभकरः ॥८०॥

"Aho Shrut Gyanam"

सं० टी०-अथ लाभकालमाह-लग्नाधिपतिर्लुब्धो ग्राहको लाभस्यैकादशस्याधिपतिर्दायको भवति परं यदि लग्नाधिपतेः संयोगो लाभाधीशेन भवति तदैव लाभः स्यादिति॥८०॥

अर्थ-अब लाभ कब होगा, इसका विचार लिखते हैं-लग्नका स्वामी लेनेवाला होता है और ग्यारहवें स्थानका स्वामी देनेवाला होता है, अब इन दोनों लग्नेश और एकादशेशका जब योग हो, अर्थात् ये जब एक स्थानमें होजाँय तब लाभ करते हैं ॥ ८० ॥

भवति परं लाभकरस्तदैव यदि भवति चंद्रदृग्लाभे।
योगाः सर्वेऽप्यफलाश्चंद्रमृते व्यक्तमेवैतत् ॥ ८१ ॥

सं०टी०-विशेषमाह-पूर्वश्लोकोक्तयोर्लग्नाधिपतिलाभाधिपयोर्योगे सति यदि तत्र चन्द्रदृष्टिर्न भवेत् तदा ते राजयोगादयोऽप्यफला भवंति निर्वीर्यत्वादिति ॥ ८१ ॥

अर्थ-अब पूर्वकथित योगमें विशेष लिखते हैं-कि, लग्नेश और एकादशेशका योग लाभकारक तभी होता है जब कि, ग्यारहवें भावको चन्द्रमा देखता हो. कारण यह है कि, चन्द्रमा विना सभी राजयोगादिक विफल होजाते हैं, यह प्रसिद्ध है ॥ ८१ ॥

पण्याधीशेनैवं कर्मेशेनैव निवृत्त्यधीशेन ॥
मृत्युपतिना च योगो लग्नाधीशस्य वक्तव्यः ॥८२

"Aho Shrut Gyanam"

तत्तत्स्थानेक्षणतः पण्यविवृद्धिः कर्मवृद्धिश्च ॥
विबुधैस्तदा निवृत्तिमृत्य्वोर्भावः परेऽप्येवम् ॥८३

सं० टी०—मतांतरमाह—पण्यस्य क्रयाणकादेरधीशः पण्याधीशः कर्माधीशनिवृत्त्यधीशमृत्य्वधीशा एतेषां चतुर्णां मध्ये येन सह लग्नाधिपतेः संयोगो भवति यदा तदा वक्ष्यमाणप्रकारेण फलं वक्तव्यम् ॥ ८२ ॥ तदेवाह—तेषां पण्याधीशकर्माधीशादिस्थानाधिपतीनां तत्र तत्र विलोकनात् तदनुसारेण तादृशं तादृशं फलं वक्तव्यम् । बहुरूपतया अपरेऽपि लग्नकार्यादिभावा एवमेव विचारणीयाः ॥ ८३ ॥ इति लाभालाभविचारद्वारं द्वादशम् ॥ १२ ॥

अर्थ—इसी रीतिसे पण्याधीश अर्थात् एकादशेश, कर्मेश (दशमेश), निवृत्त्यधीश (सप्तमेश), मृत्युपति (अष्टमेश) इन करके यदि लग्नाधीश युक्त हो और उस पण्यादि भावोंपर भावेशकी दृष्टि भी हो तो पंण्यवृद्धि, कर्मवृद्धि, निवृत्ति और मृत्यु पंडित कहें अर्थात् पण्याधीश और लग्नेशका जब योग हो और पण्यभावपर पण्येशकी दृष्टि भी हो तो पण्यकी वृद्धि, एवं कर्मादि भावोंमें भी जाननी और इसी रीतिसे अन्य भावोंकाभी विचार करना चाहिये अर्थात् जिस कार्यभावका स्वामी लग्नेशसे युक्त होकर कार्यभावको देखें, उस भावकी वृद्धि होगी—ऐसा पंडितोंने कहा है ॥ ८२ ॥ ८३ ॥

इति लाभालाभविचारद्वारम् ॥ १२ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

लग्नेशो यदि षष्ठे स्वयमेव रिपुस्तदा भवत्यात्मा॥
मृत्युकृदष्टमगोऽसौ व्ययगः सततं व्ययं कुरुते८४॥

सं॰ टी॰–अथ लग्नाधिपस्थितिफलद्वारमाह–लग्नाधिपो यदि षष्ठस्थाने स्यात्तदा स्वकार्यस्य स्वयमेव विनाशको भवति शत्रुत्वादिति । यथा यद्यष्टमस्थाने लग्नेशः स्यात् तदा प्रच्छकस्य वा कार्यस्य विनाशक एवमस्त्येव । तथा द्वादशे व्यये वर्तमानोऽसौ लग्नपतिः सततं निरन्तरं व्ययकर एव । तथाऽप्ययं विशेषः–यदि क्रूरो भवति तदा पापस्थाने व्ययो भवति, सौम्ये तु रिपुस्थाने इति भावः ॥ ८४ ॥

अर्थ–अत्र तेरहवें द्वारमें लग्नस्वामीकी स्थितिसे फल लिखते हैं। यदि लग्नेश छठे स्थानमें हो तो स्वयं अर्थात् आपसे आपही कार्यका रिपु अर्थात् कार्यनाशक होता है और यदि लग्नेश आठवें भावमें हों तो कार्यकर्त्ताकी मृत्युके कारक होते हैं, यहाँ मृत्यु शब्दसे शरीरांतही नहीं समझना किन्तु इसके अतिरिक्त भी आठ प्रकारके मरण ग्रंथांतरमें हैं, यथा–"व्यथा दुःखं भयं लज्जा रोगः शोकस्तथैव च॥बंधनं चावमानं च मृत्युश्चाष्टविधः स्मृतः ॥ " यहाँ संस्कृत टीकाकारने मृत्यु शब्दसे कार्यनाश अर्थ किया है सो असंगत प्रतीत होता है. और यदि

"Aho Shrut Gyanam"

लग्नेश बारहवें भावमें हो तो अनवरत खर्च करताहै, परन्तु यहाँ विशेष यह है कि, यदि पापग्रह लग्नेश होकर बारहवें हो तो कुत्सित कर्ममें अर्थात् जूआ आदिमें व्यय होता है और यदि शुभग्रह लग्नेश होकर बारहवें हो तो सन्मार्गसे खर्च करता है ॥ ८४ ॥

लग्नस्थं चन्द्रजं चन्द्रः क्रूरो वा यदि पश्यति ॥
धनलाभो भवेदाशु किंत्वनर्थोऽपि दृश्यते ॥८५॥

सं०टी०–विशेषमाह–लग्नस्थं चन्द्रजमिति । लग्ने विद्यमानं बुधं यदि चन्द्रमा अन्यो वा क्रूरः कश्चित्पश्यति तदा धनस्य लाभो भवति आशु शीघ्रं परं पश्चादनर्थो भवतीति वाच्यम् ८५

अर्थ–अब विशेष लिखते हैं–यदि लग्नमें स्थित बुधको चन्द्रमा अथवा कोई पापग्रह देखता हो तो शीघ्र धनका लाभ हो, किंतु लाभके पीछे कुछ अनर्थ भी देखाजाय ॥ ८५ ॥

चंद्रो लग्नपतिर्वाऽपि यदि केन्द्रे शुभाः स्थिताः ॥
किंवदंती तदा सत्या स्यादसत्या विपर्यये॥८६॥

सं०टी०–किंच चन्द्र इति । लग्ने वर्तमानश्चन्द्रो लग्नपतिर्वा यदि केन्द्रे प्रथमचतुर्थदशमसप्तमरूपस्थानविशेषे स्थितो भवति प्रश्नकाले तदा लोके श्रूयमाणा किंवदंती सत्या वाच्या ।

"Aho Shrut Gyanam"

एतदन्यथात्वेन असत्या इति भावः ॥ ८६ ॥ इति लग्नाधिपस्थितिफलद्वारं त्रयोदशम् ॥ १३ ॥

अर्थ-किसीसे सुनीहुई यह बात सत्य है वा मिथ्या इस प्रश्नमें चन्द्रमा वा लग्नस्वामी अथवा शुभग्रह केन्द्र (प्रथम, चतुर्थ, सप्तम, दशम) में स्थित हों तो वह किम्वदन्ती (किसीसे सुना हुआ वाक्य) सत्य है, ऐसा कहना और यदि विपरीत हो अर्थात् लग्नस्वामीके शत्रुग्रह या पापग्रह केन्द्रमें हों तो मिथ्या जाननी ॥ ८६ ॥

इति लग्नाधिपतिस्थितिफलद्वारम् ॥ १३ ॥

क्षेमप्रश्ने च गर्भस्य गर्भं गर्भाधिपो भवेत् ॥
न पश्यति ग्रहः क्रूरस्तत्र चास्ति च्युतिस्तदा ८७॥

सं०टी०-अथ गर्भक्षेमाक्षेमद्वारमाह-गर्भस्य क्षेमप्रश्ने कृते सति गर्भं पञ्चमस्थानं तत् स्वामी न पश्यति क्रूरग्रहः पंचमं पश्यति अथवा तत्रैव भवति तदा वाच्या अस्य गर्भस्य च्युतिः पतनं भविष्यति, विपर्यये विपर्ययः ॥ ८७ ॥ इति गर्भक्षेमाक्षेमद्वारं चतुर्दशम् ॥ १४ ॥

अर्थ-अब चौदहवें द्वारमें गर्भका क्षेमप्रश्न लिखते हैं-यदि गर्भ क्षेमप्रश्नमें गर्भाधिप अर्थात् पञ्चमभावका स्वामी पञ्चमभावको नहीं देखता हो और पापग्रह पंचम भावमें स्थित हो या पंचम भावको

"Aho Shrut Gyanam"

देखताहो तो गर्भपात होजायगा ऐसा कहना और इससे विपरीत या अन्य प्रकारकी ग्रहस्थिति हो तो गर्भकी पुष्टयादि कहना ॥ ८७ ॥

इति गर्भक्षेमद्वारम् ॥ १४ ॥

अविनष्टो यदा गर्भाधिपो गर्भं निरीक्षते ॥
तदैव प्रसवो गुर्व्या नान्यथेति विनिश्चयः ॥ ८८ ॥

सं० टी०—अथ गुर्विणीप्रसवविचारद्वारम् । गर्भाधिपः पंचमस्थानस्वामी क्रूराक्रमणाद्यभावेन अविनष्टः गर्भं पंचमस्थानं यदि पश्यति तदा तस्मिन्नेव समये प्रत्यासन्नकाले तथा प्रसवो वाच्यः अन्यथा अन्यतरत्वामिति भावः ॥ ८८ ॥ इति गुर्विण्याः प्रसवद्वारं पञ्चदशम् ॥ १५ ॥

अर्थ—अब पन्द्रहवें द्वारमें गार्भिणीका प्रसव विचार लिखते हैं—यदि गर्भाधिप (पञ्चमभावका स्वामी) अविनष्ट अर्थात् ग्यारहवें द्वारमें कहे हुये विनष्टग्रहोंके लक्षणसे रहित हो और पञ्चम भावको देखता हो तो प्रसव कहना और इससे अन्यथा हो अर्थात् विनष्टादि हो तो गर्भका भी नष्टादि कहना ॥ ८८ ॥

इति गुर्विणीप्रसवद्वारम् ॥ १५ ॥

पृच्छालग्ने च चत्वारि ग्रहयुग्मानि संति चेत् ॥
यत्र तत्रैव युग्मस्य प्रसवं ब्रुवते बुधाः ॥ ८९ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

सं० टी०–अथापत्ययुग्मप्रसवद्वारम्–गर्भिण्याः कियन्तो बालका भविष्यन्ति, इति पृच्छालग्ने यदि चतुःस्थाने चत्वारि ग्रहयुगलानि भवंति तानि यदा स्वयमन्यत्र गमनेन विच्छुरितानि भवन्ति तदा काले युगलप्रसवो वाच्यः लग्नविचारेणेत्यर्थः । "तिथिं वारं च नक्षत्रं नामाक्षरसमन्वितम् । वह्निभिस्तु हरेद्भागं-शेषो गर्भस्य कथ्यते ॥ समेन कन्या विषमेण पुत्रः शून्ये च गर्भस्य भवेद्विनाशः ।" ॥८९ ॥ इत्यपत्ययुगलप्रसवद्वारं षोडशम् ॥ १६ ॥

अर्थ–अब सोलहवें द्वारमें यमल (दो सन्तानोंका एक साथ) प्रसवज्ञान लिखते हैं–यदि प्रश्नकालमें जिस किसी चार स्थानोंमें दो दो ग्रह स्थित हों तो युग्म अर्थात् एक साथ दो सन्तानोंका प्रसव पण्डित लोग कहते हैं ॥ ८९ ॥

इत्यपत्ययुग्मप्रसवद्वारम् ॥ १६ ॥

मासज्ञानस्य पृच्छायां गर्भिण्या भृगुनन्दनः ॥
लग्नात्स्याद्यतमे स्थाने मासानाख्याति तावतः ९०

सं० टी०–अथ गर्भमाससंख्याज्ञानद्वारमाह–कियतो मासान् अयं गर्भस्थस्तत्र स्थितो भवति, इति पृच्छालग्ने सति तस्मा-

"Aho Shrut Gyanam"

ह्लाद्यतमे स्थाने शुक्रो भवति तावतो मासान् गर्भस्थितः स्थास्यति चेति वाच्यम् । अथ यदा दशमे एकादशे स्थाने शुक्रो भवति तदा पञ्चमस्थानतो गणनीयमिति भावः ॥ ९० ॥ इति गर्भमाससंख्याज्ञानद्वारं सप्तदशम् ॥ १७ ॥

अर्थ—अब सत्रहवें द्वारमें कितने महीने यह गर्भ और रहेगा, इसको जाननेके लिये लिखते हैं–प्रश्नलग्नसे शुक्र जितने संख्यक स्थानमें स्थित हो उतने महीनेपर्यन्त गर्भकी स्थिति कहनी और यदि शुक्र लग्नसे दशवें, ग्यारहवें और बारहवें स्थानमें हो तो पञ्चमभावसे लेकर शुक्रके स्थानतक गिनकर माससंख्या जाननी ॥ ९० ॥

इति गर्भमाससंख्याज्ञानद्वारम् ॥ १७ ॥

स्थाने चतुर्थे सौम्यत्वमापन्ने ललना धृता ॥
सप्तमे सौम्यतां प्राप्ते प्रष्टुः कांता विवाहिता ॥ ९१ ॥

सं०टी०—अथ स्त्रीप्राप्तिविचारद्वारमाह–लग्नाच्चतुर्थे सौम्यग्रहे सति दृष्टे वा इयं स्त्री धृता वाच्या, यदि लग्नात्सप्तमे सौम्यतां प्राप्ते विवाहितेयं भार्येति वाच्यम् ॥ ९१ ॥

अर्थ—अब अठारहवें द्वारमें स्त्रीलाभसम्बन्धी विचार लिखते हैं– यदि प्रश्नलग्नसे चौथे स्थानमें शुभग्रह प्राप्त हो या चौथेपर शुभग्रहकी दृष्ट्यादि हो तो धरी हुई स्त्री मिलेगी और यदि सप्तम स्थानमें शुभग्रह

"Aho Shrut Gyanam"

हो या शुभग्रहकी दृष्टयादि हो तो प्रश्नकर्ताको विवाहिता स्त्री मिलेगी ऐसा कहना ॥ ९१ ॥

क्रूरिते च चतुर्थे स्यात्परिणीता नितंबिनी ॥
सप्तमे क्रूरिते वा स्याद्धृतैव हि कुटुंबिनी ॥ ९२॥

सं० टी०-अथात्रैव विशेषमाह-चतुर्थे स्थाने क्रूरिते क्रूरग्रहयुते दृष्टे वा भार्येयं परिणीतेति वाच्यम् । तथा सप्तमे स्थाने क्रूरिते क्रूरग्रहयुते दृष्टे वा धृता एवेति निर्णयो वाच्यः ॥ ९२ ॥

अर्थ-यदि प्रश्नलग्नसे चतुर्थस्थानमें पापग्रह स्थित हो या चतुर्थस्थानपर पापग्रहकी दृष्टि आदि हो तो विवाहिता स्त्री मिले और यदि सप्तमस्थान क्रूरित अर्थात् पापग्रहकी दृष्टियोगादिसे युक्त होय तो धरी हुई स्त्री प्रश्नकर्ताको मिले ॥ ९२ ॥

उभयोः सौम्यतां प्राप्ते द्वे स्तो धृतविवाहिते ॥
उभयोः क्रूरतां प्राप्ते न धृता न विवाहिता ॥९३॥

सं० टी०-विशेषमाह-यदि चतुर्थे च सप्तमे स्थाने सौम्यग्रहौ भवतः तदा वाच्यमेका धृता एका परिणीता, तथा चतुर्थे सप्तमे वा यदि क्रूरग्रहौ स्यातां तदा वाच्यं न धृता न परिणीता अस्य भार्या इति भावः ॥ ९३ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ—यदि चतुर्थ और सप्तम इन दोनों स्थानोंमें शुभग्रहयुक्त या शुभग्रहकी दृष्ट्यादि हो तो एक धरेली और एक विवाहिता स्त्री प्राप्त हो और इन दोनों स्थानोंमें पापग्रहोंके योगादि हो तो धरेली और विवाहिता इन दोनोंमें कोई भी नहीं मिले ॥ ९३ ॥

न धृता परिणीता वा योगेऽत्र सुखदायिका ॥
परिणीता धृता वाऽपि पाश्चात्त्ये सुखदायिका९४॥

सं०टी०—विशेषमाह—यदि चतुर्थे सप्तमे स्थाने क्रूरग्रहो भवति तदा धृता परिणीता वा भार्या सुखदायिका न, किंतु पाश्चात्त्ये शेषे काले सुखदायिकेति वाच्यम् । प्रकारांतरेणाह—"लग्नस्थे सप्तमे पत्नी भर्तुरादेशकारिणी । लग्नेशे सप्तमस्थे तु भार्यादेशकरः पतिः" ॥ ९४ ॥ इति स्त्रीप्राप्तिविचारद्वारमष्टादशम् ॥ १८ ॥

अर्थ-पूर्व चतुर्थस्थानमें पापग्रहोंके योगादिसे व्याही स्त्री और सप्तम स्थानमें पापग्रहोंके योगादिसे रखेली स्त्रीका लाभ जो लिखा है, उसमें विशेष लिखते हैं—कि, इन योगोंमें धरेली या विवाहित स्त्री पहिले सुख देनेवाली नहीं होती, किन्तु पीछे सुख देनेवाली होती है, यहां विशेष विचार है कि सप्तम स्थानका स्वामी यदि लग्नमें हो तो स्त्री स्वामीकी आज्ञा पालन करनेवाली होती है और लग्नेश यदि सप्तम स्थानमें हो तो स्वामी ही स्त्रीकी आज्ञा करनेवाला होता है ॥ ९४ ॥

इति स्त्रीप्राप्तिविचारद्वारम् ॥ १८ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

**रिपुक्षेत्रस्थितौ द्वौ तु लग्नाद्यदि शुभग्रहौ ॥
क्रूरश्चैकस्तत्र जाता भवेत्स्त्री विषकन्यका ॥९९॥**

सं० टी०—अथ विषकन्यानिर्णयद्वारमाह—पृच्छालग्नाज्जन्मलग्नाद्वा षष्ठे स्थाने द्वौ सौम्यग्रहौ स्यातां यदि एकश्च क्रूरो भवति तस्मिन् तत्र काले जाता स्त्री विषकन्यकेयमिति वाच्या । " लग्ने सौरी रविः प्रान्ते धर्मस्थे धरिणीसुते । अत्र योगे यदा जाता भवेत्स्त्री विषकन्यका ॥ क्रूरद्वयमध्यगते लग्ने चन्द्रे च कन्यका जाता । हरति स्वं पितृपक्षं स्वमपि कुलं घातयत्यखिलम्" ॥९९॥ इति विषकन्यानिर्णयद्वारमेकोनविंशम् १९

अर्थ—अब उन्नीसवें द्वारमें विषकन्यायोग लिखते हैं—प्रश्नलग्नसे या जन्मलग्नसे छठे स्थानमें दो शुभग्रह और एक पापग्रह स्थित हों तो इस योगमें जन्मी हुई स्त्री विषकन्या होती है. अब यहाँ ग्रन्थांतरसे लिखे हुए टीकाकारके विषकन्यायोगोंके श्लोकोंका अर्थ लिखता हूँ:—यदि लग्नमें शनि, बारहवें रवि और नौवें स्थानमें मंगल हों तो इस योगमें जन्मी हुई स्त्री विषकन्या होती है । तथा दो पापग्रहोंके बीचमें लग्न और चन्द्रमा हों तो विषकन्या होती है, विषकन्यायोगमें जन्मी स्त्री अपने पिताके कुल और अपने अर्थात् स्वामीके कुलका नाश करती है ॥ ९९ ॥

इति विषकन्यानिर्णयद्वारम् ॥ १९ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

**भावांतगतः खेटः परभावफलं ददाति पृच्छासु ॥
अंतघटीयावदसावासीनफलं विवाहादौ ॥ ९६ ॥**

सं० टी०—अथ भावान्तगतग्रहफलद्वारमाह—पृच्छालग्ने यो ग्रहो यस्मिन् अंशके वर्तते स ग्रहस्तत्र स्थितोऽपि आयियासुराशिफलं ददाति सर्वत्र पृच्छासु, परं विवाहादौ कार्ये प्रांतघटीयावत् यत्र नवांशके भवति तस्यैव राशिफलं ददाति नान्यराशेरिति भावः ॥९६॥ इति भावांतग्रहफलद्वारं विंशम् ॥२०॥

अर्थ—अब बीसवें द्वारमें भावके अन्तमें स्थित ग्रहोंके फलदातृत्व लिखते हैं—समस्त प्रश्नोंमें भावके अन्तमें स्थित जो ग्रह सो अगले भावका फल देता है और विवाहादि कार्योंमें भावके अन्तघडी अर्थात् समाप्ति पर्यन्त जिस भावमें ग्रह है, उसी भावका फल देता है ॥ ९६॥

इति भावान्तग्रहद्वारम् ॥ २० ॥

**अंबर(१०)गतं शुभग्रहयुग्मं वृष्टिर्भवेद्विवाहादौ ॥
लग्ने शुभत्रयस्य तु योगे महती भवेद्वृष्टिः ॥९७॥**

सं० टी०—अथ विवाहसम्बन्धिविचारद्वारमाह—अंबरगतमिति । विवाहलग्नसमये यद्यंबरगतं शुभग्रहयुग्मं भवति यदि दशमस्थाने द्वौ शुभग्रहौ स्यातामित्यर्थः । तदा विवाहसमये

"Aho Shrut Gyanam"

वृष्टिर्भवेत् । अथवा लग्ने यदि शुभग्रहत्रयं भवति तदा महती वृष्टिर्भवति । अथवा अयमेवोत्तरार्धार्थः वृष्टिप्रश्ने वक्तव्य इति भावः ॥ ९७ ॥

अर्थ-एकीसवें द्वारमें प्रथम विवाहादि समयोंमें वृष्टिज्ञान लिखते हैं- यदि विवाहादि लग्नसे दशम स्थानमें दो शुभग्रह हों तो विवाहादि कार्यके समयमें वर्षा हो और यदि लग्नमें तीन शुभग्रह हों तो बहुत वर्षा होवे । इसी प्रकार वर्षा होगी या नहीं ?-इस प्रश्नमें भी विचारना अर्थात् प्रश्नलग्नसे दशमस्थानमें दो शुभग्रह हों तो साधारण और तीन शुभग्रह लग्नमें हों तो महान् वर्षा होगी ऐसा कहे ॥ ९७ ॥

मूर्तावुच्चः खेटो जामित्रे दधाति येन दृशम् ॥
स नो हंति कलत्रं क्रूराश्चान्ये तु निघ्नंति ॥ ९८॥

सं० टी०-अत्रैव च कलत्रजीवनमरणादिज्ञानमाह-मूर्तौ लग्ने यदि कश्चिदुच्चग्रहो भवति विवाहसमये तदा कलत्रं नो हंति स्त्रीविनाशं न कुरुते, च पुनः अन्ये क्रूरग्रहाः सप्तमस्थाने वर्तमानाः कलत्रं विनाशयंतीति भावः ॥ ९८॥ इति विवाहादि-सम्बन्धिविचारद्वारमेकविंशम् ॥ २१ ॥

अर्थ-अब यहीं स्त्रीका जीवन और मरणका ज्ञान लिखते हैं- सप्तमस्थानमें पापग्रहके होनेसे स्त्रीकी मृत्यु होती है, वहाँ विशेष लिखते

"Aho Shrut Gyanam"

हैं कि, अपने उच्चराशिमें बैठा हुआ ग्रह यदि लग्नमें हो तो जिस लिये सप्तमस्थानको पूर्णदृष्टिसे देखता है, इसी लिये स्त्रीका मरण नहीं करता है और अन्य पापग्रह अर्थात् उच्चादिसे भिन्न स्थानस्थित ग्रह यदि लग्नमें हों तो स्त्रीकी मृत्यु करते हैं ॥ ९८ ॥

इति विवाहादिसम्बन्धिविचारद्वारम् ॥ २१ ॥

क्रूरः खेटो लग्ने विवादपृच्छासु जयति विवदंतम्॥
सर्वावस्था[illegible] परं नीचास्ते जयति न द्विपितम् ९९

सं०टी०—अथ विवादविचारद्वारमाह—अहं वादे अमुकं वादिनं जेष्यामि न वेति प्रश्ने यदि क्रूरग्रहो मूर्तौ तदा वक्तव्यं जयो भवति । तथा स एव मूर्तिस्थः क्रूरग्रहो नीचो वाऽस्तं गतो वा भवति तदा तस्य जयो न भवति इति वाच्यम् ॥ ९९ ॥

अर्थ—अब बाईसवें द्वारमें जय पराजय लिखते हैं—यदि विवाद सम्बन्धी अर्थात् अमुक जनसे विवाद हो रहा है उसमें जीतूँगा या हारूँगा? ऐसे प्रश्नमें पापग्रह लग्नमें बैठा हो तो वादीको जीते यदि और वही पापग्रह नीचराशिमें, सूर्यके सान्निध्यसे अस्त, या शत्रुग्रहके राशिमें हो तो वादीको नहीं जीते अर्थात् पराजय पावे ॥ ९९ ॥

लग्ने द्यूने च यदा क्रूरः खेटो विवादिनोर्न तदा ॥
कलहनिवृत्तिः कालेन जयति बलवान्गतबलं तु ॥

"Aho Shrut Gyanam"

सं० टी०—किंचिद्विशेषमाह—च पुनः लग्ने तथा द्यूने सप्तमस्थाने उभयोः क्रूरग्रहौ भवतः तदा बहुकालं यावत् विवादो भवति तथा तयोर्द्वयोर्मध्ये यदा यो ग्रहः सबलो भवति तदा च तस्य वादिनः प्रतिवादिनो वा जयो भवतीति वाच्यम् १००॥

अर्थ—यदि लग्न और सप्तम इन दोनों स्थानोंमें पापग्रह तुल्यबली हों तो वादी प्रतिवादी इन दोनोंमें कोई भी नहीं जीते. किन्तु बहुतसमय पीछे लडाईकी निवृत्ति हो और यदि वे पापग्रह न्यूनाधिक बलवाले हों तो अधिकबलवाला न्यूनबलवालेको जीतता है अर्थात् लग्नस्थित पापग्रह बली हो तो प्रश्नकर्ताकी जय हो और यदि सप्तमस्थित पापग्रह बलवान् हो तो शत्रुकी जय हो ॥ १०० ॥

लग्नं द्यूनं मुक्त्वा परस्परं क्रूरयोः सकलदृष्टौ ॥
विवदाद्विवादियुगलं क्षुरिकाभ्यां प्रहरति तदैवम् ॥

सं० टी०—तत्रैव विशेषमाह—लग्नं मुक्त्वा द्यूनं सप्तमस्थानं च मुक्त्वा अन्यत्र वर्तमानौ क्रूरग्रहौ यदि परस्परं पूर्णदृष्ट्या पश्यतः तदा वादं कुर्वाणं युगलं कर्तृ क्षुरिकाभ्यां यमदंष्ट्रारूपाभ्यां तदा प्रहारं करोतीति ।कोऽर्थः—कटारिकाभ्यां परस्परं प्रहारं कुरुत इत्यर्थः। अत्र वादिप्रतिवादिनौ प्रहारविषयौ

"Aho Shrut Gyanam"

वाच्यौ, यतोऽग्रेऽपि विवादशत्रुहनने इत्यस्य विवादशब्देनोपात्तत्वात् ॥ १०१ ॥ इति विवादविचारद्वारं द्वाविंशम् ॥ २२ ॥

अर्थ—लग्न और सप्तम इन दोनों स्थानोंको छोडकर अन्य स्थानस्थित दो पापग्रहोंकी परस्पर पूर्णदृष्टि हो तो दोनों वादीप्रतिवादियोंमें छुरिका अर्थात् तलवार आदिके प्रहारोंसे युद्ध हो ॥ १०१ ॥

इति विवादविचारद्वारम् ॥ २२ ॥

व्रतदानपट्टारोपणप्रतिमास्थापनविधिःस्मृतोगुरुणा दशमस्थानं कार्यं रविदृष्टिप्रभृतिभिर्बलवत् १०२

सं० टी०—अथ संकीर्णपदनिर्णयद्वारमाह—व्रतदानं दीक्षा पट्टारोपणं पट्टाभिषेकः, प्रतिमास्थापनं प्रतिष्ठा, एतेषां कार्याणां विधिषु इतिकर्तव्येषु प्रारब्धेषु गुरुणा कार्यकर्त्रा उपदेशिकेन वा दशमं कर्माख्यं स्थानं रविदृष्टिप्रभृतिभिर्ग्रहविलोकनैर्बलवत् बलाधिकं कर्तव्यं दशमे स्थाने बलवति कार्यं कर्तव्यं नान्यथेति भावः ॥ १०२ ॥

अर्थ—दीक्षाग्रहण, राज्याभिषेक और प्रतिमास्थापन ये सब कार्य यदि लग्नसे दशमस्थान रव्यादिग्रहोंकी दृष्ट्यादिसे बलवान् हो तो करने चाहिये, ऐसा गुरुजनोंने कहा है ॥ १०२ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

यत्रान्यलाभयोगोनभवतिनवमंचभवतिशुभदृष्टम्
तत्राचिंतितलाभः प्रष्टुर्गणकेन निर्देश्यः ॥१०३॥

सं० टी०-अत्रैव पुनर्विशेषमाह-यत्र लाभादिपृत्रवच्छायाम् अन्येषां शुभग्रहादीनां लाभयोगो न भवति सबलत्वाभावात् । अन्यच्च-नवमस्थानं शुभग्रहयुक्तं दृष्टं वा भवति, तदा गणकेन ज्योतिर्विदा वाच्यम्, तव प्रष्टुः प्रच्छकस्य अचिंतितलाभो भविष्यति इति ॥ १०३ ॥

अर्थ-यदि लाभप्रश्नमें अन्य कोई लाभकारक योग प्रबल नहीं हो और यदि नवमभाव शुभग्रहसे देखा जाता हो तो प्रश्नकर्त्ताके मनोवाञ्छितका लाभ होगा ऐसा ज्योतिषीलोग कहें ॥ १०३ ॥

रंध्रे लग्नाधिपतिर्भुनक्ति कार्यं तदैव यदि तस्मात्॥
शत्रौ यात्यथ मित्रे तस्मिन्काले तदा सिद्धिः १०४

सं०टी०-अपरं किंचित्तत्रैवाह-रंध्रे अष्टमस्थाने प्रश्नकाले यदि लग्नाधिपतिः भवति तदा प्रारब्धकार्यं भुनक्ति न भवति । यदि तस्मात् अष्टमस्थानात् रिपुक्षेत्रे व्रजति तदैव कार्यभंगं करोति । अथ एवं लग्नाधिपतिरष्टमस्थानात् मित्रक्षेत्रे याति तदा तस्मिन् काले तस्य कार्यस्य सिद्धिर्भवति इति वाच्यम् । इदमत्र तत्त्वम्-"पृच्छाकाले गृहपो यत्र गतस्तत्र तत्फलं दद्ते । अरिनीचास्ते विफलः स्वोच्चे मित्रोच्चभे सफलः" ॥ १०४ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ–यदि प्रश्नलग्नका स्वामी प्रश्नलग्नसे अष्टमस्थानमें हो प्रश्नसंबन्धी कार्यको भक्षण करजाता है अर्थात् नाश कर देता परन्तु यदि शत्रुके घरमें हो तो और यदि मित्रके गृहमें प्राप्त होय कार्यसिद्धि करता है । यहाँ सारांश यह है कि लग्नस्वामी जैसे स्थान हो, वैसाही फल करता है अर्थात् शत्रुगृहमें, नीचराशिमें और सु सान्निध्यसे हो अस्त हो तो प्रश्नसम्बन्धी कार्यको नाश करता है त स्वगृह, स्वोच्च और मित्रके गृहमें हो तो कार्यको सिद्ध करता है १०

वीक्षणयुग्भ्यां क्रूरैर्लग्नषडष्टसु च विद्ध इत्यबलः
पुष्णाति कष्टभावं मृत्युमपि प्रश्नतश्चन्द्रः ॥ १०५

सं०टी०–प्रश्नकाले चन्द्रफलमाह—यदा प्रश्नकाले ल वाऽष्टमे षष्ठे वा वर्तमानश्चन्द्रः क्रूरैर्ग्रहैर्वीक्षितो युतो वा भव स विद्ध इत्युच्यतेऽबलः स चन्द्रः कष्टभावं केवलं पुष्णा किंतु मृत्युमपि करोति, प्रश्नलग्नादिति भावः ॥ १०५ ॥

अर्थ–प्रश्नकालमें पापग्रहसे दृष्ट या युक्त चन्द्रमा प्रश्नल लग्न, छठे, आठवें स्थानमें स्थित होनेसे विद्ध और निर्बल कहाता यह चन्द्रमा प्रश्नकार्यसम्बन्धी दुःखहीको बढाता है और मृत्यु करता है ॥ १०५ ॥

द्वादशे शोभनः खेटो विवाहादिषु सद्व्ययम् ॥
क्रूरोऽप्यसद्व्ययं चोरराजाग्निप्रभवं ग्रहः ॥ १०६

"Aho Shrut Gyanam"

सं० टी०—अथ प्रश्नकालाद्विशेषमाह—द्वादशे स्थाने यदि श्चित्सौम्यग्रहो भवति तदा शोभने द्रव्यव्ययो भवति, यदि रूग्रहस्तदा चोरराजाऽग्निप्रमुखेभ्योऽशोभनस्थाने द्रव्यव्ययो वति। "रवौ द्वादशे चन्द्रे वाऽवश्यं राजकुले व्ययम्। विचा- येद् व्यवस्थैवमेवं सर्वत्र पंडितः॥" ॥ १०६ ॥ इति संकीर्ण- दनिर्णयद्वारं त्रयोविंशम् ॥ २३ ॥

अर्थ—यदि प्रश्नलग्नसे बारहवें स्थानमें शुभग्रह बैठा हो तो विवाह, ज्ञ आदि शुभ कार्यमें व्यय होता है और बारहवें स्थानमें पापग्रह ो तो असद्व्यय (जूआ—वेश्या आदिमें) तथा चोर, राजा, अग्निसे व्यका नाश होता है और रवि वा चन्द्रमा बारहवें स्थानमें हों तो जकुलसे ही अवश्य धनका व्यय होता है॥ १०६ ॥

इति संकीर्णनिर्णयद्वारम्॥ २३ ॥

गृहमागतो न यदसौ किं बद्धः किमथ हत इति प्रश्ने। मूर्तौ क्रूरो यदि तत्र हतो न बद्धोऽथवा पुरुषः १०७

सं० टी०—अथ दीप्तपृच्छाद्वारमाह—कश्चिन्नरो देशांतरं गतो नाद्याप्यागत इति किं बद्धो हतो वेति प्रश्ने यदि मूर्तौ क्रूरग्रहस्तदा न हतो न बद्धः, किंतु कुशली वर्तते इति वाच्यम् ॥ १०७ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ–अब चौबीसवें द्वारमें विदेश गये हुए मनुष्यकी स्थिति लिखते हैं–यदि कोई ऐसा प्रश्न करे कि, अमुक पुरुष विदेश गया सो घर नहीं आया है, क्या कहीं बँधा हुआ है या मर गया ? ऐसे प्रश्नमें यदि प्रश्नलग्नमें पापग्रह हो तो वह मारा नहीं गया है और बन्धनमें भी नहीं है अर्थात् कुशलसे है, ऐसा कहना चाहिये ॥ १०७ ॥

सप्तमगोऽष्टमगो वा चेत्क्रूरस्तद्धतोऽथ बद्धो वा ॥
मूर्तौ च सप्तमेऽपि च यद्वा लग्नेऽष्टमे च भवेत् १०८
क्रूरस्तदाऽसौ पुरुषोबद्धश्च हतश्च मुच्यते च परम्॥
दीप्तत्वाद्विहितमिदं व्याख्यानं क्रूरविषयमिह १०९

सं० टी०–अत्रैव विशेषमाह–सप्तमेऽष्टमे वा स्थाने यदि क्रूरग्रहो भवति तदा बद्धो हतो वा मृत इति वाच्यम् । तथा मूर्तौ वा सप्तमेऽपि च स्थाने यदि क्रूरस्तदा वाच्यं मारितो बद्धो वेति । लग्नेऽष्टमे क्रूरग्रहो भवति मृतो बद्धश्च भवेत् । अथ मूर्तौ अष्टमस्थाने यदि क्रूरग्रहो भवति तदाऽप्येवम् ॥ १०८ ॥ ॥ १०९ ॥ इति दीप्तपृच्छाद्वारं चतुर्विंशम् ॥ २४ ॥

अथ–इसी प्रश्नमें विशेष लिखते हैं–कि, प्रश्नलग्नसे सप्तम या अष्टम स्थानमें यदि पापग्रह हो तो मरण वा बन्धन कहना, अथवा लग्न और सप्तम इन दोनोंमें पापग्रह हों या लग्न और अष्टम इन दोनों स्थानोंमें पापग्रह हों तो वर्त्तमान कालमें बन्धन या

"Aho Shrut Gyanam"

मरण प्राप्त है परन्तु आगे निर्मुक्त हो जायगा। यह पापग्रहका विवरण दीप्तत्व होनेके कारणसे कहा है ॥ १०८ ॥ १०९ ॥

इति दीप्तपृच्छाद्वारम् ॥ २४ ॥

चतुर्थे दशमे वापि यदि सौम्यग्रहो भवेत् ॥
तदा न गमनं क्रूरैस्तत्रैव गमनं भवेत् ॥ ११० ॥

सं० टी०-अथ पथिकगमनागमनद्वारमाह-गमागमनपृच्छायां यदि लग्नाच्चतुर्थे वा दशमे स्थाने सौम्यग्रहे सति गमनं भवति। यदि तत्रैव क्रूरग्रहः स्यात्तदा गमनं न भविष्यतीति वाच्यम् ॥ ११० ॥

अर्थ-अब पचीसवें द्वारमें पथिकका गमनागमन लिखतेहैं-यदि कोई पूछे कि, मुझको कहीं जानेकी इच्छा है सो वहाँ जाना होगा या नहीं? ऐसे प्रश्नमें प्रश्नलग्नसे चौथे या दशवें स्थानमें यदि शुभग्रह हो तो जाना नहीं हो और यदि वही चौथे, दशवें स्थानमें पापग्रह हों तो अवश्य वहाँ जाना हो ॥ ११० ॥

द्वितीये केंद्रतोऽभ्येति यदा खेटस्तदागमः ॥
आयियासुं ग्रहं दृष्ट्वा ब्रूयादिदमशंकितः ॥ १११ ॥

---

१ यहां मरणशब्दसे आठ प्रकारका मरण है:-
यथा-"व्यथा दुःखं भयं लज्जा रोगः शोकस्तथैव च। बन्धनं चावमानं च मृत्युश्चाष्टविधः स्मृतः ॥" येही आठ हैं। अन्यथा मुच्यते परम्" इसकी व्यर्थता होगी ॥

"Aho Shrut Gyanam"

सं० टी०—अत्रैव विशेषमाह—"प्रयाति सहजस्थानमसौ यस्यां शुभग्रहः । आयाति पथिकस्तत्र तस्यामेव नरो गृहम् ॥ प्रयातीति आक्षेपः । आगमनपृच्छालग्नाद्यादि केंद्रतश्चतुर्थस्थानाद्वा द्वितीये वा पञ्चमे चैकादशे वा स्थाने सौम्यग्रहोऽभ्येति तदा गमनं न भवेत्, यस्यां वा घटिकायां खेटःक्रूरो वा शुभो वा अभ्येति प्राप्नोति तदा तस्यां घटिकायां तदागमस्तस्य पथिकस्यागमनं वाच्यम् । आयियासुम् आगमनशीलं ग्रहं दृष्ट्वा निःशंकमेतद्वाच्यमिति भावः ॥ १११ ॥

अर्थ—विदेश गयाहुआ पुरुषका आगमन लिखते हैं—प्रश्नकालमें केन्द्रसे द्वितीय स्थानोंमें अर्थात् दूसरे, पांचवें, आठवें और ग्यारहवें स्थानोंमें यदि ग्रह प्राप्त हों तो उसी समयमें विदेश गयाहुआ पुरुषका आगमन कहना । अथवा केन्द्रप्राप्त ग्रहको केन्द्रसे द्वितीय (२–५–८–११) स्थानोंमें प्राप्त होनेका समय देखकर निःसन्देह आनेका समय कहना अर्थात् यदि (२–५–८–११) इन स्थानोंमें ग्रह प्राप्त हों तो शीघ्रही विदेशगत पुरुषका आगमन कहना और यदि केन्द्रही (१–४–७–१०) में ग्रह हों परन्तु (२–५–८–११) इन स्थानोंमें आनेवाले हों तो जितने दिनोंमें वे ग्रह इन स्थानोंमें आवेंगे उतनही दिनोंमें विदेश गयाहुआ पुरुषकाभी आना होगा ऐसा कहना चाहिये ॥ १११ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

द्वितीयमायियासुश्च चंद्रे केंद्राद्विशेषतः ॥
पथिकागमनं ब्रूते मुक्त्वा सप्तमकेन्द्रकम्॥११२॥

सं०टी०–पुनरत्रैव पथिको ग्रामांतरात्कदा समायाति इति पृच्छालग्ने यदि केंद्राद्द्वितीयस्थानं चन्द्रमा यस्यां वेलायामायाति तदैव पथिकस्यागमनं विशेषतो वक्तव्यम् । परं यदि सप्तमकेन्द्रादष्टमं याति वक्तव्यं मृतमिति विशेषः ॥ ११२ ॥

अर्थ–पूर्व कहेहुएमें विशेष लिखते हैं–कि, सातवें केन्द्रको छोडकर अन्य केन्द्र (१–४–१०) से द्वितीय स्थान (२–५–११)में चंद्रमा हो तो विशेषरूपसे आगमन कहना. सप्तम केन्द्रको छोडनेका अभिप्राय यह है कि, सप्तमस्थानसे अष्टमस्थानमें चन्द्रमा जानेवाला हो तो ग्रामान्तर गये हुए पुरुषको मरण या मरणतुल्य कष्ट आदि कहना ॥ ११२ ॥

इन्दुः सप्तमगो लग्नात्पथिकं वक्ति मार्गगम् ॥
मार्गाधिपश्च राश्यर्द्धात्परभागे व्यवस्थितः ११३

सं०टी०–पुनरत्रैव विशेषमाह–चन्द्रो लग्नाद्यदि सप्तमें स्थाने भवति तदा पथिकं मार्गस्थं कथयति, तथा सप्तमस्थानं मार्गस्तस्याधिपो नवमराश्यधिपो वा राश्यर्द्धात्परभागस्थितः

"Aho Shrut Gyanam"

सप्तमराशेर्नवमराशेर्वा प्रथमांशपंचदशादपरे लब्धांशे चतुर्थे स्थितः पथिकं मार्गगं वक्ति, (धर्मश्च मार्गश्च अधिपश्च मार्गाधिपाः) ॥ ११३ ॥

अर्थ—इसमें भी विशेष यह कि, यदि नवम भावका स्वामी जिस किसी राशिमें पन्दरह अंशसे अधिक हो और चन्द्रमा प्रश्नलग्नसे सातवें स्थानमें हो तो वह पथिक रास्तेमें आरहा है ऐसा कहना ११३

चरलग्ने चरांशे च चतुर्थे चन्द्रमाः स्थितः ॥
ब्रूते प्रवासिनं व्यक्तं समायातं स्ववेश्मनि॥११४॥

सं०टी०—किंचिद्विशेषमाह—आगमनप्रश्ने चरलग्ने मेषादि॰ लग्ने तस्यैव च नवांशकोऽपि चरः स्यात्तस्मिन्सति यदि चतुर्थचरस्थाने चन्द्रो भवति तदा स्पष्टं यथा भवति तथा वक्तव्यम् । प्रवासिनं वैदेशिकं स्वकीयगृहमागतं ब्रूते चन्द्र इत्युपचारश्चेदं दृष्ट्वा पुरुष इति वाच्यम् । तथा पाठांतरेणाह॰ " दूरगतस्यागमनं सुतधनसहजास्थितैर्ग्रहैर्लग्नात् । सौम्यैर्नष्ट॰ प्राप्तिर्लब्धागमनं गुरुसिताभ्यां च ॥ १ ॥ अष्टमस्थे निशानाथे कंटकैः १ । ४ । ७ । १० पापवर्जितैः । प्रवासी शीघ्रमायाति सौम्यैर्लाभसमन्वितैः ॥ २ ॥ " अत्रागमनयोगानाह—"चरलग्ने स्थिरे चन्द्रे समेति परचक्रकम् । चरे चन्द्रे स्थिरे लग्ने नैति तद्वद्

रिपोर्बलम् ॥ ३ ॥ वृषमेषधनुःसिंहा मूर्तौ तुर्ये यदि स्थिताः। अग्रहाः सग्रहा वाऽपि शत्रुं ह्यावर्तयंति यत्॥ ४॥लग्नाभ्रचन्द्रधर्मेशैः स्थिरस्थैर्नागमो रिपोः । सूर्येन्दू वा सुखस्थौ च चरे ज्ञे स्थिरगेक्षिते ॥ ५ ॥ लग्नपुण्यपती द्वौ तु युतौ दृष्टौ परस्परम् ॥ परागमनकर्ताऽसौ ह्यन्यथाऽप्यन्यथा फलम् ॥ ६ ॥" इत्यन्यग्रन्थात् ॥ ११४ ॥ इति पथिकगमनागमनद्वारं पञ्चविंशम् ॥ २५ ॥

अर्थ-यदि प्रश्नकालमें चरराशि अर्थात् मेष, कर्क, तुला और मकर इनमेंसे कोई राशि लग्न हो तथा चरराशिहीका नवांशभी लग्नमें हो और लग्नसे चौथे स्थानमें चन्द्रमा बैठा हो तो वह विदेशी अपने घर पहुँच गया ऐसा स्पष्ट कहना चाहिये ॥ ११४ ॥

इति पथिकगमनागमनद्वारम् ॥ २५ ॥

स्मरे व्यये धने क्रूरे लग्ने मृत्यौ रिपौ शशी ॥
सद्यो मृत्युकरो योगः क्रूरे वा चन्द्रपार्श्वगे॥११५॥

सं० टी०-अथ मृत्युयोगद्वारमाह-रोगिणो जीवनमरणपृच्छायां यदि स्मरे सप्तमे, व्यये द्वादशे, धने द्वितीये, एतेषु स्थानेषु यदि क्रूरो ग्रहो भवति तदपेक्षया लग्ने, मूर्तौ, अष्टमे रिपौ, षष्ठे, एतेषु स्थानेषु यदि शशी चन्द्रो भवति तदा शीघ्रं

"Aho Shrut Gyanam"

मृत्युकारको योगो भवति अथवा चन्द्रसमीपस्थे क्रूरग्रहे सति तदा मृत्युयोगो भवति ॥ ११५ ॥

अर्थ—अब छव्वीसवें द्वारमें रोगीके जीवन मरणका विचार लिखते हैं—यदि प्रश्नलग्नसे सातवें, बरहवें, दूसरे स्थानमें पापग्रह हों और लग्न, आठवें, छठे स्थानमें चन्द्रमा हो तो शीघ्र मृत्यु करनेवाला योग होता है अथवा चन्द्रमाके दोनों तरफ यदि पापग्रह हों तो भी शीघ्र मृत्युकारक योग होता है ॥ ११५ ॥

लग्ने रविः स्मरे चन्द्रो भवेद्योगोऽयमेव हि ॥
एतेषु रोगिणो मृत्युः सद्यस्त्वन्यस्य चापदः ॥ ११६ ॥

सं० टी०—तथा यदि लग्ने रविर्भवति, स्मरे सप्तमे चन्द्रो भवति तदाऽप्ययमेव योगो भवति । एतेषु प्रागुक्तेषु मृत्युयोगेषु रोगिणः पृच्छायां मरणं वक्तव्यम् । तथा अन्यस्य लाभादि-प्रच्छकस्य चापदो वक्तव्या इति ॥ ११६ ॥ इति मृत्युयोग-द्वारं षड्विंशम् ॥ २६ ॥

अर्थ—लग्नमें रवि और सातवें स्थानमें चन्द्रमा हो तो भी मृत्युयोग होता है । इन योगोंमें रोगीका प्रश्न किया गया हो तो शीघ्र मरण होता है, अन्य विषयका प्रश्न हो तो आपद (विपत्ति) होती है ॥ ११६ ॥

इति मृत्युयोगद्वारम् ॥ २६ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

पृच्छायां मूर्तिगे क्रूरे दुर्गभंगो न जायते ॥
बलहीनेऽपि वक्तव्यं किं पुनर्बलशालिनि ॥११७॥

सं०टी०-अथ दुर्गभंगद्वारमाह-दुर्गादिभंगप्रश्ने यदि मूर्तौ क्रूरग्रहो भवति तदा न भवत्येव दुर्गभंगः । कदापि स क्रूरः मूर्तिस्थोऽपि बलहीनो भवति तदाऽपि दुर्गभंगो न भवति । बलशालिनि बलाधिके ग्रहे किमुच्यते इति ॥ ११७ ॥

अर्थ-अब सत्ताईसवें द्वारमें दुर्गभंगका विचार लिखते हैं-कोई प्रश्न करे कि, शत्रु युद्ध करनेको आता है उससे मेरा किला टूटेगा या नहीं ? वहां यदि प्रश्नलग्नमें कोई पापग्रह हो तो दुर्ग (किला) नहीं टूटेगा, ऐसा निर्बलभी पापग्रह हो तो भी कहना फिर बलवान् पापग्रह लग्नमें बैठा हो तो कहना ही क्या है अर्थात् कथमपि किला भंग नहीं होगा ॥ ११७ ॥

क्षितिपुत्रो विशेषेण राहुर्यदि विलग्नगः ॥
शक्रेणापि तदा दुर्गभङ्गं कर्तुं न शक्यते ॥११८॥

सं०-टी०-क्षितिपुत्रो मंगलः तथा विशेषेण राहुर्यदि लग्ने भवति तदा शक्रेण इंद्रेणापि दुर्गभंगं कर्तुं न शक्यते । आस्ता-मन्येनेत्यर्थः ॥ ११८ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ—विशेषकरके मंगल या राहु लग्नमें हो तो इन्द्र भी युद्ध करनेवाला हो तो भी किला नहीं टूट सकता है फिर इतर मनुष्यकी तो बातही क्या है ॥ ११८ ॥

सप्तमो यदि राहुः स्याद्दुर्गं झटिति भज्यते ॥
मूर्तौ क्रूरः शुभोऽमुष्मिन् क्रूरदृष्टिर्न शोभना ११९

सं॰टी॰—यदि पृच्छालग्नात्सप्तमो राहुर्भवति तदा दुर्गभंगं झटिति शीघ्रं भवतीति वाच्यम् । अत्र कारणमाह—यतः कारणादमुष्मिन् दुर्गभंगप्रश्ने क्रूरो ग्रहो मूर्तौ च वर्तमानः शुभो भवति । यद्यपि परो ग्रहः सप्तमस्थानत्वात्संपूर्णदृष्टिर्भवत्यतः क्रूरदृष्टिर्न शोभनेति भावः ॥ ११९ ॥ इति दुर्गभंगद्वारं सप्तविंशम् ॥ २७ ॥

अर्थ—यदि प्रश्नलग्नसे सातवें स्थानमें राहु हो तो शीघ्र किला टूट जायगा, कारण यह है कि, ऐसे प्रश्नमें लग्नमें पापग्रह शुभ होते हैं और पापग्रहकी दृष्टि शुभ नहीं होती अर्थात् सप्तमस्थानमें पापग्रहके रहनेसे लग्नपर पूर्ण दृष्टि होती है, अतः किलाभंग कहना ॥ ११९ ॥

इति दुर्गभंगद्वारम् ॥ २७ ॥

एवं चौर्याय यामीति मूर्तौ क्रूरः शुभावहः ॥
दृष्टिः शुभावहाऽत्रापि न क्रूरस्य कदाचन १२० ॥

"Aho Shrut Gyanam"

सं०टी०-अथ चौर्यादिस्थानद्वारमाह-एवं पूर्वोक्तप्रकारेण इह चौर्याय गच्छामीति प्रश्ने अत्रापि मूर्तौ वर्तमानः क्रूरग्रहः शुभावहः शोभनकर्ता तथा प्राग्वत् अपि प्रश्ने क्रूरग्रहस्य दृष्टिः शुभावहा कदापि न भवतीत्यर्थः ॥ १२० ॥

अर्थ-अब अट्ठाईसवें द्वारमें चौरादिकोंका प्रश्न विचार लिखते हैं, यदि कोई ऐसा प्रश्न करे कि, मैं चोरी करनेको जाऊँगा लाभ होगा या नहीं ? ऐसे प्रश्नमें लग्नमें पापग्रह हो तो शुभ (लाभादि) होता है परन्तु यहाँपर भी लग्नपर पापग्रहकी दृष्टि कदापि शुभ देनेवाली नहीं होती ॥ १२० ॥

विवादे शत्रुहनने रणे संकटके तथा ॥
क्रूरे मूर्तौ जयो ज्ञेयः क्रूरदृष्ट्या पराजयः ।१२१।

सं० टी०-विवादे, शत्रुहनने, रणे युद्धे, संकटके एतेषु सर्वेषु प्रश्नेषु यदि मूर्तौ क्रूरग्रहो भवति तदा जयो वाच्यः । क्रूरदृष्ट्या पराजयो वक्तव्य इति ॥ १२१ ॥

अर्थ-विवादमें, शत्रुको मारनेमें, युद्धमें, संकट (आवश्यक विवाहयात्रादि) में भी पापग्रह लग्नमें हो तो जय होती है और प्रश्नलग्नपर पापग्रहकी दृष्टि होय तो पराजय होती है ॥ १२१ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

मूर्तिसप्तमयोः क्रूराभावे लग्नपतिर्व्यये ॥
षष्ठेऽष्टमे द्वितीये वा तदा दुर्गं न भज्यते ॥१२२॥

सं० टी०—मूर्तिसप्तमयोः स्थाने यदि क्रूरग्रहो न भवति, लग्नपतिर्व्यये द्वादशे भवति, अथवा षष्ठेऽष्टमे द्वितीये भवति तदा दुर्गभंगो न भवतीति ॥ १२२ ॥

अर्थ—यदि लग्न और सप्तम इन दोनों स्थानोंमेंसे किसीमें पाप-ग्रह न हो और लग्नका स्वामी बारहवें, छठे, आठवें या दूसरे स्थानमें हो तो किलाभंग नहीं हो ॥ १२२ ॥

अपरेष्वपि चौर्यादियोगेष्वेवं विना ग्रहम् ॥
मूर्तौ सर्वत्र वक्तव्यं चौर्यप्रश्ने शुभग्रहे ॥ १२३ ॥
मूर्तौ सति न चौर्यं स्यात्सफलं केवलं भवेत् ॥
शरीरे मुख्यकुशलं शुभयोगप्रभावतः ॥ १२४॥

सं०- टी०—विशेषमाह—अपरेषु विवादशत्रुहननादिषु कार्येषु मूर्तौ क्रूरग्रहः विलोकनीयः, जयदायी भवति न परः सौम्यः । तथा चौर्यप्रश्ने यदि क्रूराऽभावेन मूर्तौ शुभग्रहो भवति तदा वक्तव्यं चौर्यस्य लाभो न भविष्यति । किंतु मध्येऽपरो लाभो भविष्यतीति । तथा अस्य चोरस्य शरीरे कुशलं शोभनं ग्रह-प्रभावात् ॥ १२३ ॥ १२४ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ-इसी प्रकार अन्य जो चोरी करना, विवाद करना, शत्रुको मारना, युद्ध करना इत्यादि योगमें भी लग्नमें पापग्रहके नहीं रहनेसे विचारकर कहना चाहिये और चौरप्रश्नमें यदि लग्नमें शुभग्रह हो तो चोरीसे धन नहीं मिले किन्तु केवल अन्य कोई शुभ फल प्राप्त हो, और लग्नमें शुभयोग प्रभावसे शरीरमें कुशलता रहे ॥१२३॥१२४॥

रणे चौर्यादिहनने धातुवादादिकर्मसु ॥
क्रूराक्रूरसमायोगान्मूर्तावेव विचार्यते ॥ १२५ ॥

सं०टी०-एतेषु रणचौर्यादिकार्येषु मूर्तिरेव विचारणीया । यदि प्रश्नकाले मूर्तौ क्रूरग्रहः स्यात्तदा शोभनः । यदा सौम्यस्तदा न शोभनः । क्रूराक्रूरविचारेण तादृशमेव फलं वक्तव्यमित्यर्थः ॥ १२५ ॥

अर्थ-युद्धमें, चोरीमें, शत्रुको दमन करनेमें और धातुवादादि कर्ममें लग्नमें पापग्रह और शुभग्रहके योगसे फलका विचार किया जाता है अर्थात् पूर्वोक्त कार्योंमें लग्नमें पापग्रह शुभदायक होता है और शुभग्रह अशुभ करताहै ॥ १२५ ॥

मूर्तौ क्रूरग्रहः श्रेयाञ्छ्रेयसी क्रूरदृङ् न हि ॥
शुभो न शोभनो मूर्तौ शुभदृष्टिस्तु शोभना१२६

"Aho Shrut Gyanam"

सं० टी०–एतेषु पूर्वोक्तेषु विवादचौर्यदुर्गभंगादिषु मूर्तौ वर्तमानः श्रेयान्कार्यसाधक इत्यर्थः क्रूरस्य दृष्टिर्न श्रेयसी न शोभना कार्यभंगकरत्वात् । तथा च शुभग्रहो मूर्तौ न शोभनः कार्यासाधकत्वात् । तु पुनः शुभग्रहस्य दृष्टिः सर्वत्र शोभना इति भावः ॥ १२६ ॥ इति चौर्यादिस्थानद्वारमष्टाविंशम्॥२८॥

अर्थ–इन पूर्वोक्त कार्योंमें लग्नमें पापग्रह श्रेष्ठ होताहै किन्तु पापग्रहोंकी दृष्टि शुभ नहीं होती तथा लग्नमें शुभग्रह शुभ नहीं होता किन्तु शुभग्रहकी दृष्टि शुभ होतीहै ॥ १२६ ॥

इति चौर्यादिस्थानद्वारम् ॥ २८ ॥

क्रेता लग्नपतिर्ज्ञेयो विक्रेताऽऽयपतिः स्मृतः ॥
गृह्णाम्यहमिदं वस्तु सति प्रश्ने अमूदृशे ॥ १२७॥

सं० टी०–अथ क्रयणार्घद्वारम्–क्रेता ग्राहकोऽत्र लग्नपतिर्ज्ञातव्यः । विक्रेता तु आयस्यैकादश ११ स्थानस्य पतिः । अत्र कश्चिद्वदति इदं अमुकं वस्तु गृह्णामि मम लाभो भविष्यति? इति प्रश्ने सति ॥ १२७ ॥

अर्थ–अब उनतीसवें द्वारमें क्रयविक्रय और अर्घविचार लिखते हैं-यदि कोई पूछे कि, हम अमुक वस्तु मोल लेंगे लाभ होगा या नहीं?

"Aho Shrut Gyanam"

ऐसे प्रश्नलग्नका स्वामी क्रेता (खरीदनेवाला) और ग्यारहवें भावका स्वामी विक्रेता ('बेचनेवाला) कहा गया है ॥ १२७ ॥

बलशालि विलग्नं चेद्गृह्यते यत्क्रयाणकम् ॥
तस्मात्क्रयाणकाल्लाभः प्रष्टुर्भवति निश्चितम् १२८

सं० टी०—तस्मिँल्लग्नाधिपतिर्यदि लग्नं पूर्णया दृष्ट्या पश्यति यल्लग्नमिति हेतोरुच्यते। त्वया पृष्टं वस्तु ग्राह्यं तस्मात्क्रयाणकात्प्रष्टुर्लाभो निश्चयेन भविष्यति अत्र यादृशो लग्नाधिपतिरुच्यते उदितो मित्रक्षेत्री वर्गोत्तमश्च यावतीः विंशोपका लग्न पश्यति तावद्विंशोपकालाभो भविष्यति इति भावार्थः ॥ १२८॥

अर्थ—यदि लग्नका स्वामी लग्नको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो उस वस्तुको खरीदनेसे प्रश्नकर्त्ताको निश्चय लाभ होता है परन्तु यहाँ विशेष यह है कि लग्नका स्वामी यादृश उदित, स्वक्षेत्र, मित्रक्षेत्र, वर्गोत्तम आदिमें स्थित होकर लग्नको जितनी दृष्टिसे देखता हो उतना ही लाभ होता है अर्थात् एक चरण दृष्टिसे देखता हो तो सवाया लाभ, दो चरण दृष्टिसे देखता हो तो ड्यौढा इत्यादि ॥ १२८ ॥

विक्रीणाम्यमुकं वस्तु प्रश्नेऽप्येवंविधे सति ॥
आयस्थाने बलवति विक्रेतव्यं क्रयाणकम् १२९

"Aho Shrut Gyanam"

स्वक्षेत्रे तु बलं पूर्णं पादोनं मित्रभे ग्रहे ॥
अर्धं समगृहे ज्ञेयं पादं शत्रुगृहे स्थिते ॥ १३० ॥

सं० टी०—कश्चित्पृच्छति अहममुकं वस्तु विक्रीणामीति प्रश्ने सति यदि यस्यैकादशस्थानस्य स्वामी स्वस्थाने भवति पश्यति वा स्वस्थानं तदा वक्तव्यं तव वस्तुविक्रयणे लाभो भविष्यतीति ॥ १२९ ॥ १३० ॥

अर्थ—यदि कोई पूछे कि, मैं अमुक वस्तुको बेचूँगा लाभ होगा या नहीं? ऐसे प्रश्नमें प्रश्नलग्नसे ग्यारहवें स्थान बलवान् हो तो खरीदी हुई वस्तु बेचनेसे लाभ कहना अर्थात् ग्यारहवें स्थानका स्वामी ग्यारहवें भावमें हो या पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो लाभ होता है. यहाँ बल जाननेके लिये स्थानपरत्वसे बल कहते हैं—अपने गृहमें पूर्ण बल होता है, मित्रके गृहमें तीन चरण, समके गृहमें आधा, शत्रुके घरमें एक चरण (चौथाभाग) बल होता है ॥ १२९ ॥ १३० ॥

समर्घं वा महर्घं वा वस्तु मे कथयामुकम् ॥
पृच्छायां येन खेटेन शुभत्वं प्रतिपाद्यते ॥ १३१ ॥
खेटोऽसौ यावतो मासान् याति लग्नस्य सौम्यताम् ।
विधत्ते तावतो मासान्समर्घं ब्रुवते बुधाः ॥ १३२ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

सं० टी०-पुनरत्रैव विशेषमाह-अमुकं वस्तु समर्घं महर्घं वा भविष्यति मम कथय इति प्रश्ने तस्मिँल्लग्ने येन खेटेन ग्रहेण शुभभावः प्रतिपाद्यते स्वयमुदितत्वेन सबलत्वं क्रियते ॥ १३१ ॥ असौ खेटो ग्रहः यावत्संख्यान्मासान् अस्य पृच्छालग्नस्य सौम्यभावं विधत्ते तावतो मासान् क्रयाणकं समर्घं भवतीति वाच्यम् ॥ १३२ ॥

अर्थ-यदि कोई ऐसा प्रश्न करे कि, अमुक वस्तु सस्ती रहेगी या महँगी होगी ? ऐसे प्रश्नमें जिस ग्रहसे लग्न बलयुक्त होता हो वह ग्रह जितने मासतक उस प्रश्न लग्नसे अशुभ दायक नहीं हो तबतक वह वस्तु समर्घ (सस्ती) रहती है, ऐसा पण्डित लोग कहते हैं ॥ १३१ ॥ १३२ ॥

अथासावशुभश्चिंत्यः कियद्भिर्वासरैरयम् ॥
सौम्यभावं विलग्नस्य विधास्यति विनिश्चितम् १३३

सं० टी०-अथ व्यतिरेकमाह-अथेति प्रकारांतरेण । अथ यद्यसौ लग्नपो लग्नस्थो वा सौम्यग्रहावेतौ न क्रूरः स्यात्तदा तादृशं विचिंत्यम् । असावशुभग्रहः कियद्भिर्दिवसैरस्य सौम्यभावं सबलत्वं विधास्यतीति विचिंत्यम् ॥ १३३ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ–इसी प्रकार अशुभभी विचारना अर्थात् प्रश्न लग्न यदि पापग्रहकी दृष्टियोगादिसे दूषित हो, स्वामी शुभग्रहसे दृष्ट युक्त न हो तो उस वस्तुकी महर्घ (महँगी) होती है परन्तु कबतक महँगी रहेगी ? इसके लिये ऐसा विचार है कि, जितने दिनमें वह प्रश्न लग्न शुभत्वको प्राप्त हो, उतने दिनादिमें उस वस्तुकी सस्ती निश्चय होती है ॥ १३३ ॥

ज्ञातव्या दिवसैर्मासा मासैस्तावद्भिरस्य हि ॥
समर्घता वस्तुनो हि प्रतिपाद्या विचक्षणैः ॥१३४॥

सं० टी०–अत्र गुरुणा ग्रहस्य दिवससंख्यायां मासाः कल्पनीयास्ततस्तावद्भिर्मासैः अस्य वस्तुनः समर्घता भविष्यतीति विचक्षणैः ज्योतिर्विद्भिः प्रतिपाद्यं प्रष्टुर्वक्तव्यमिति यावत् ॥ १३४ ॥

अर्थ–यदि महर्घ समर्घ ज्ञानमें पूर्व प्रकारसे दिन आवे तो उतने मासमें वह वस्तु महर्घ समर्घ होगी, ऐसा विद्वान् कहे ॥ १३४ ॥

अधिष्ठातुर्बलं ज्ञेयं लग्ने स्वामिविवर्जिते ॥
बलहीने त्वधिष्ठातुः प्राहुः स्वामिबले बलम् १३५॥

सं०टी०–अत्र विशेषमाह–यस्य वस्तुनो योऽधिष्ठाताऽधिदेवता भवति तस्य बलं सम्पूर्णं द्रष्टव्यं विलोकनीयं ज्ञेयम् ।

"Aho Shrut Gyanam"

केत्याह-स्वामियुक्तदृष्ट्यादिहीने लग्ने । कुत इत्याह-बलेति । तु पुनः बलहीने अधिष्ठातरि लग्ने सति वस्तुनः स्वामिनो बले बलमाहुर्दैवज्ञा इति शेषः। यत्र लग्नपत्यादिबलं न भवति तत्र वस्तुनः स्वामिनो बले लग्नस्यापि बलमिति भावः । अत्र तु केषां वस्तूनां कः स्वामीति निर्णेतुं ग्रन्थान्तरस्थश्लोकानाह- "रसानां तु प्रभुः सोमः सस्यानां च बृहस्पतिः । आधाता च विधाता च भूतानां भार्गवः स्मृतः ॥ १ ॥ कंगुकोद्रवमाषाणां तिलानां लवणस्य च । सर्वेषां कृष्णवस्तूनां प्रभुरेव शनैश्चरः ॥ २ ॥ स्वर्णादेः पीतधान्यस्य यवगोधूमसर्पिषाम् । शालीक्षूणां च सर्वेषां प्रभुरेषां बृहस्पतिः ॥ ३ ॥ शुक्रस्तु सर्वसस्यानां द्विदलानां बुधः स्मृतः । स्नेहानां च रसानां च गंधादीनां दिवाकरः ॥ ४ ॥ कोशधान्यस्य सर्वस्य तण्डुलानां च मङ्गलः । इत्येवं ते ग्रहाः सर्वे स्वामिनः सर्ववस्तुषु ॥ ५ ॥" इति ग्रन्थान्तराज्ज्ञातव्याः ॥ १३५ ॥

अर्थ-यदि क्रय विक्रय प्रश्नमें लग्न अपने स्वामीकी दृष्टि योगादिसे वर्जित हो तो उस वस्तुका जो स्वामी है उसका भी बल देखना चाहिये और यदि वस्तुका स्वामी निर्बल हो तो, लग्नस्वामीका बल देखना चाहिये अर्थात् प्रश्न लग्न स्वामी और उस वस्तुका स्वामी इन दोनोंमेंसे कोईभी बलवान् हो तो उस वस्तुकी सस्ती कहनी चाहिन

"Aho Shrut Gyanam"

ऐसा पण्डितलोग कहते हैं । यहां किस वस्तुका कौन स्वामी है, इसको जाननेके लिये संस्कृतटीकाके श्लोकार्थ लिखते हैं--रसोंके स्वामी चन्द्रमा है, सस्यका स्वामी बृहस्पति, प्राणियोंके स्वामी शुक्र, काउनि, कोदो, उडद, तिल, नमक और जितनी कृष्ण वस्तु हैं उन सभीका स्वामी शनैश्चर है । सोना, पीला धान्य, जौ, गेहूँ, घृत, शालिधान्य, ऊख इन सभीका स्वामी बृहस्पति है, सस्योंके शुक्र, दलिहन (दाल) का बुध, तेल, रस और सुगन्धयुक्त पदार्थका स्वामी रवि है और भण्डारमें रखा हुआ धान्य तथा चावलका स्वामी मंगल है ॥ १३५ ॥

क्रयाणकानां पृच्छायां सौम्या ज्ञेया महात्मभिः॥
समर्घं सबले लग्ने महर्घमबले पुनः ॥ १३६ ॥

सं० टी०–अथोपसंहरन्नाह–क्रयाणकानां वस्तूनाम् इयं पृच्छा सौम्या ज्ञेया । कथमित्याह–महात्मभिः समर्घं सबले लग्ने, महर्घमबले, पुनः सम्यक् विनिश्चित्य वाच्यमिति भावः ॥ १३६ ॥

अर्थ–क्रय विक्रय प्रश्नमें प्रश्नलग्न बलवान् हो तो उस वस्तुकी सस्ती और लग्न निर्बल हो तो महँगी होती है, ऐसा महात्मा लोगोंसे कहा गया है ॥ १३६ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

सौम्यदृष्टं स्वामिदृष्टं सौम्यकेन्द्रे युतं शुभैः ॥
सबलं ब्रुवते लग्नमबलं त्वन्यथा बुधाः ॥ १३७ ॥

सं० टी०–एतदेवोपदिशति–सौम्यग्रहैर्दृष्टं भवति अथवा लग्नादिस्वामिना च दृष्टम् अथवा सौम्यग्रहाः केन्द्रे भवंति अथवा शुभग्रहैर्युक्तं भवति यल्लग्नं चैवंभूतं भवति तदेव लग्नं सबलं ब्रुवते कथयंति दैवज्ञा इति शेषः । तु पुनः एतस्मादन्यथाभूतं लग्नम् अबलं वदन्तीत्यर्थः ॥ १३७ ॥ इति क्रयाणकार्घद्वारमेकोनत्रिंशम् ॥ २९ ॥

अर्थ–लग्नका बलाबल इस प्रकार जानना चाहिये कि, लग्न शुभ ग्रह और स्वामीसे देखा जाता हो तथा केन्द्र (१–४–७–१०) में शुभग्रह स्थित हों तो लग्न बलवान् होती है इससे विपरीत अर्थात् पापग्रहसे दृष्ट, केन्द्रमें पापग्रह हों तो निर्बल कहाती है, ऐसा पण्डितलोग कहते हैं ॥ १३७ ॥

इति क्रयाणकार्घद्वारम् ॥ २९ ॥

मृत्युर्धरणकं नौश्च फलेन सदृशं त्रयम् ॥
म्रियते येन योगेन तेन योगेन मुच्यते ॥ १३८ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

क्षेमेण नौः समायाति मृत्युयोगे समागते ॥
आमयावी स म्रियते बद्धः शीघ्रेण मुच्यते १३९

संॱटीॱ—अथ नौमृत्युबन्धद्वारमाह—'यस्मिन् लग्ने स्मरे व्यये' इत्यादिश्लोकोक्तो मृत्युयोगो भवति तदा वाच्यं धरणकं बद्धं मुक्तं भविष्यति तथा नावागमनप्रश्नेऽपि प्राग्वत् मृत्युयोगो भवति तदा क्षेमेण नौका समायाति इति वाच्यम् । परन्तु आमयाविनो रोगिणः पृच्छायां तु मरणमेवेति । बद्धप्रश्नेऽपि मृत्युयोगे सति बद्धः शीघ्रं मुक्तो भविष्यतीति श्लोकद्वयार्थः ॥ १३८ ॥ १३९ ॥

अर्थ—अब तीसवें द्वारमें मरण, बन्धन और नौकाके प्रश्नमें विचार लिखते हैं—मृत्यु, बन्धन, नौकाका आगमनादि ये तीनों फलसे समान हैं क्योंकि, छब्बीसवें द्वारमें रोगप्रश्नमें जिन योगोंसे मरण कहा है, वेही योग बन्धन प्रश्नमें हों तो बन्धनसे छूटता है और नौका प्रश्नमें हों तो नौका कुशलपूर्वक आती है परन्तु पूर्वोक्त मृत्युयोगोंमें रोगीका प्रश्न हो तो मरणही होता है ॥ १३८॥१३९॥

क्षेमायातं वहित्रस्य बुडनं प्लवनं जले ॥
पण्यव्यवहृतौ लब्धिर्नाविप्रश्नचतुष्टयम् ॥ १४०॥

"Aho Shrut Gyanam"

सं० टी०-वहित्रस्य प्रवहणस्यागमनं क्षेमायातम् १ जले बुडनम् २ जले प्लवनम् ३ जलमध्ये वस्तुलंघनं पण्यानां प्रवहणागतक्रयाणकानां व्यवहारे लब्धिलाभः ४ इति नौविषये प्रश्नचतुष्टयं भवतीति ॥ १४० ॥

अर्थ-नौकाके सम्बन्धसे चार प्रकारके प्रश्न होते हैं-एक तो नावका कुशलपूर्वक आगमन, दूसरा जलमें डूब जाना, तीसरा वायु आदिसे इधर उधर जलमें घूमते रहना, चौथा नावमें आईहुई वस्तुसे लाभ होना ये चार प्रकारके प्रश्न हैं ॥ १४० ॥

क्षेमागमनपृच्छायां मृत्युयोगोऽस्ति चेत्तदा ॥
क्षेमेणायाति नौः पण्यलाभो व्यवहृतौ भवेत् १४१

सं० टी०-आद्यन्तप्रश्ने फलमाह-प्रवहणस्य क्षेमागमनप्रश्ने यदि पृच्छालग्ने प्रागुक्तमृत्युयोगो भवेत् तदा वाच्यं नौः क्षेमेणायाति। तथा पण्यव्यवहारे लाभप्रश्ने प्राग्वदेव मृत्युयोगः स्यात्तदानीं तव वस्तुव्यवहारे महालाभ एवेति ॥ १४१॥

अर्थ-नाव आनेके प्रश्नमें तथा नावमें आयीहुई वस्तुसे लाभप्रश्नमें पूर्वोक्त (छब्बीसमें द्वारमें कहेहुये) योग हों तो कुशलपूर्वक नावका आना और नावमें आई हुई वस्तुका व्यवहार करनेसे लाभ होता है ॥ १४१ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

नेक्षते लग्नपो लग्नं मृतिपो नेक्षते मृतिम् ॥
यानपात्रस्य वक्तव्यं निश्चितं बुडनं तदा ॥१४२॥

सं० टी०—अथ नौबुडनमाह—यस्मिँल्लग्ने लग्नाधिपतिः लग्नं नेक्षते न पश्यति तथा मृत्युपोऽष्टमस्थानपतिर्मृत्युम् अष्टमस्थानं न पश्यति तदा वक्तव्यं निश्चयेन पोतस्य बुडनमेवेति। अत्र व्यतिरेकश्लोकः। "लग्नं पश्यति लग्नेशश्छिद्रं मृत्युपतिर्यदि। न बुडति तदा पोतो लाभो भवति निश्चितम्" ॥१४२॥

अर्थ—नौका डूबगई या आती है ऐसे प्रश्नमें प्रश्नलग्नका स्वामी प्रश्नलग्नको नहीं देखता हो और प्रश्नलग्नसे आठवें भावका स्वामी आठवें भावको नहीं देखता हो तो निश्चय नौका डूब गई ऐसा कहना चाहिये ॥ १४२ ॥

लग्नपश्चाष्टमस्थानाधिपतिर्वा भवेद्यदि ॥
सप्तमे कथयंत्यंतर्जले वापनिकं तदा ॥ १४३ ॥

सं० टी०—अथ जलवापनिकामाह—प्रश्नसमये लग्नपोऽष्टमस्थानपतिर्वा यदि सप्तमे स्थाने भवेत्तदा वक्तव्यं जलमध्ये वस्तुवापनिकैव भविष्यति ॥ १४३ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ-यदि प्रश्नलग्नस्वामी या प्रश्नलग्नसे अष्टमभावका स्वामी सप्तमस्थानमें हो तो जलके बीचमें नौका भ्रमण कर रही है ऐसा कहना चाहिये ॥ १४३ ॥

नीचस्थोऽस्तमितो वा मृत्युपतिर्नवमगो रिपुक्षेत्रे॥
नीचो वा भवति यदा व्यवहृतलाभो भवेन्न तदा॥१४४॥

सं० टी०-अत्रैव प्रश्ने यदि मृत्युपतिर्नीचक्षेत्रेषु गतस्तथाऽस्तं गतो वा सन् नवमे स्थाने रिपुक्षेत्रे भवति इति प्रकारत्रयेण मृत्युपतिसम्बन्धिना न लाभः अथवा यत्र कुत्रापि वर्तमानो मृत्युपतिः स्वयं नीचो भवति एक एव तदा वक्तव्यं नावागतवस्तुव्यवहारे लाभो न भविष्यतीति ॥ १४४ ॥
इति नौमृतिबन्धनत्रयद्वारं त्रिंशम् ॥ ३० ॥

अर्थ-यदि अष्टमस्थानका स्वामी नीचराशिमें या सूर्यके साथ होकर प्रश्नलग्नसे नवम स्थानमें हो अथवा केवल शत्रुगृह या अपने नीचराशिमें होकर जिस किसी स्थानमें हो तो उस वस्तुसे लाभ नहीं होय ॥ १४४ ॥

इति नौमृतिबन्धनद्वारम् ॥ ३० ॥

लग्ने यदिह विचारो भवति नवांशकगतैर्ग्रहैस्तत्र।
बीजं गुरूपदेशो लग्ननवांशोऽन्यथायुक्तम्॥१४५॥

"Aho Shrut Gyanam"

सं० टी०—अथातीतदिनलाभादिविचारद्वारमाह—"शुक्रो वा चन्द्रमा वापि नेक्षते यदि पञ्चमम् । तदा पुत्रस्य पृच्छायां पुमान् नास्तीति कथ्यते ॥ यदीन्दुः शुक्रभौमाभ्यां गर्भो वा वीक्ष्यते यदा । तदाऽसौ जायते पुत्रो नात्र कार्या विचारणा॥" इहेति । अतीतदिनफलप्रश्ने यो विचारो लग्ने भवति सर्वोऽपि तत्कालपृच्छालग्ने नवभागीकृते वर्तमानमंशं गृहीत्वा तत्र स्वांशस्थग्रहैर्विचार्यं तदनुसारेणातीतदिनफलं वाच्यम् । न ह्यत्र ग्रन्थकारेण नवांशकानयनं तत्फलादि चोक्तमित्याह—बीजं गोप्यं बीजाक्षररूपम् इति यावत् । गुरूपदेशादेवा-वगन्तव्यम् । अन्यथा गुरूपदेशं विनाऽयुक्तमेवाम्नायाभा-वात् ॥ १४९ ॥

अर्थ—यहाँ एकतीसवें द्वारमें बीतेहुए समयमें लाभालाभादि कैसा हुवा है इसका विचार लिखतेहैं—कोई पूछे कि, हमको गत समयमें क्या सब फल हुवा है? वहां लग्नपरसे जो कुछ विचार अन्यप्रश्नोंमें पूर्व कहे हैं सो सब जिस नवांशमें ग्रह हों उसीसे विचारना चाहिये परन्तु नवांशपरसे फलादेश कहनेके लिये गुरुका उपदेशही बीज है इसलिये बिना गुरुके उपदेशसे-नवांशफल कहना अयुक्त है ॥ १४९॥

"Aho Shrut Gyanam"

**तत्तन्नवांशकगतान्खेचरान्न्यस्य तद्दिने लग्ने ॥
प्रष्टुरवधार्यगणकैर्वाच्यमतिक्रांतदिनवृत्तम् १४६॥**

सं० टी०-लग्ने प्रागुक्तेऽपि बीजाक्षररूपाम्नाय इति यावत् वक्ष्यमाणो वा विचारो भवति स नवांशकगतैर्ग्रहैस्तथा हि— "नवांशोऽर्कासितज्ञानां सत्रिभागमहस्त्रयम् । नाड्यः पञ्चदशै-वेन्दोर्भौमे पञ्च दिनानि च । मासो जीवे सत्रिभागस्त्रयोदश च वासराः । शनेर्मासत्रयं त्र्यंशो राहोर्मासद्वयं पुनः ॥" इति मार्गः । स्वं नवांशरीत्या इति संक्रांतिदिनगतलाभादिविचार-मापकग्रहैर्विवक्षुराह-अतीतदिनस्य नवांशकैर्दैवज्ञैरतीतस्य गतस्य दिवसस्यातिगतार्थाद्वर्तमाना ये खेचरा ग्रहास्तान् तद्दिनलग्ने पृच्छालग्ने विन्यस्य कुंडलिकायां विलेख्य इत्यर्थः । गणकै-र्दैवज्ञैरतीतस्य गतस्य दिवसस्यातिक्रांतं वृत्तं तवैतल्लाभहान्या-दिकं यातमित्यादिरूपम् अवधाय प्रष्टुर्वाच्यम् ॥ १४६ ॥
इत्यतीतदिनलाभादिद्वारम् ॥ ३१ ॥

अर्थ—प्रश्नकालमें जो ग्रह जिस नवांशमें हों उन सबको यथा-वत् लिखकर बीतेहुये फलादेश गणितको जाननेवाले ज्योतिषी प्रश्न-कर्ताको कहें । यहाँ ग्रहोंके नवांशभोगकी दिनादि संख्या लिखते हैं—वहाँ रवि, शुक्र और बुध ये तीनों ग्रह तीन दिन और बीस घडी

"Aho Shrut Gyanam"

। ३ ।२० में एक नवांशखण्डको भोगते हैं, चन्द्रमा पन्दरह १५ घडीमें, मंगल ९ दिनमें, बृहस्पति एक मास तेरह दिन, बीस घडीमें १ । १३।२०, शनि तीन मास दश दिन ३ । १० में,राहु दो मासमें एक नवांशखण्डको भोगता है, इसी अनुसारसे फलादेशमें विचार करना चाहिये ॥ १४६ ॥

इत्यतीतदिनलाभादिद्वारम् ॥ ३१ ॥

लग्नपतिर्यत्रांशे पृच्छालग्ने तमंशमालोक्य ॥
लग्नाधिपांशलग्नांशनाथयोर्दृग्युतिसुहृत्त्वम् १४७॥

सं० टी०—अथ लग्नेशांशलाभद्वारमाह—पृच्छालग्ने लग्नपतिर्यस्मिन्नवांशे भवति तमंशं सम्यगवलोक्य ततो लग्नाधिपतिलग्नवांशकनाथयोर्दृष्टियुक्तत्वं सुहृत्त्वं चेति विचारणीयमिति ॥ १४७ ॥

अर्थ—अब बत्तीसवें द्वारमें लग्नेशपरसे लग्नादि भावकी वृद्धि आदिके विचार लिखतेहैं—प्रश्नकालिक लग्नके स्वामी जिस नवांशकमें हो उस नवांशको अच्छी रीतिसे देखकर लग्नस्वामी जिस नवांशमें हो उस नवांशके स्वामी और लग्न जिस नवांशमें हो उसके स्वामी इन दोनोंकी परस्पर दृष्टि योग और मित्रताको विचारना चाहिये ॥ १४७॥

"Aho Shrut Gyanam"

यत्र स्यात्तत्र भवेत्सुंदरता तनुधनादिभावेषु ॥
यावल्लग्नाधिपतेरंशकालः स कालश्च ॥ १४८ ॥

सं० टी०-ततः किमित्याह-यत्र 'तनुधनादिषु लग्नांशेशाधिपतिर्वा भवति तत्र तन्वादिस्थानेषु सुंदरता भवतीत्याह-यावदिति । लग्नपतेर्यावदवस्थितिकालः अंशाधिपतेश्चावधिकाल इति ॥ १४८ ॥

अर्थ-जिस लग्नादि भावोंमें लग्नस्वामीके अंशस्वामीकी और लग्न-नवांशस्वामीकी दृष्टि, योग और मित्रता हो उस भावकी वृद्धि होती है। परन्तु कितने कालतक उस भावकी वृद्धि रहेगी ? इसके लिये विचार है कि, लग्नपतिका जो नवांश है उस नवांशतुल्य कालपर्यन्त वृद्धि कहनी चाहिये ॥ १४८ ॥

संचार्योऽसौ तावद्यावत् पूर्णा भवन्ति ते भावाः ॥
मासफलं संपूर्णं जातं लग्नाधिपात्तदिदम् ॥१४९॥

सं० टी०-ततोऽपि किमित्याह-संचार्य इति । स लग्नपतिरंशाधिपतिश्च तावद्धनादिस्थानेषु संचार्यो यावद्धनादयो भावाः पूर्णा भवन्ति । यत्र स्थाने लग्नांशाधिपयोर्दृष्टिः संपूर्णा युक्तत्वं मित्रत्वं वा स्यात् तदा तस्य स्थानस्य संख्यया माससंख्यया

"Aho Shrut Gyanam"

वक्तव्येति द्वितीयफलम् ॥ १४९ ॥ इति लग्नेशांशलाभद्वारं द्वात्रिंशम् ॥ ३२ ॥

अर्थ—लग्नस्वामी और लग्नांशस्वामीको तब तक उन धनादि भावोंमें चलना चाहिये जबतक कि वे धनादिभाव पूर्ण हों और जिस स्थानपर लग्नेश और अंशेशकी दृष्टि आदि हो उस स्थानतुल्य संख्याके मासमें कार्यसिद्धि आदि कहना चाहिये ॥ १४९ ॥

इति लग्नेशांशलाभद्वारम् ॥ ३२ ॥

द्रेष्काणे यत्र लग्नं स्याद्द्वाविंशतितमे ततः ॥
द्रेष्काणे यदि लग्नेशः पृच्छायां तन्मृतिर्ध्रुवम् १५०

सं० टी०—अत्र द्रेष्काणादिद्वारमाह—द्रेष्काणेति । यत्र द्रेष्काणे लग्नत्रिभागरूपे लग्नं भवति तस्माल्लग्नाद्द्वाविंशतितमे अष्टमे स्थाने द्रेष्काणे यदि लग्नाधिपतिर्भवति तदा रोगिणः पृच्छायां द्रेष्काणानुसारेण मृतिर्मरणं वाच्यम् ॥ १५० ॥

अर्थ—अब तेंतीसवें द्वारमें द्रेष्काणादि फल लिखते हैं—यदि प्रश्न-लग्नके द्रेष्काणसे बाईसवें द्रेष्काणमें प्रश्नलग्नस्वामी हो तो रोगप्रश्नमें मरण कहना चाहिये ॥ १५० ॥

लग्नपो मृत्युपश्चापि लग्ने स्यातामुभौ यदि ॥
स्थितौ द्रेष्काण एकस्मिंस्तदा मूर्तिर्निरामया ५१

"Aho Shrut Gyanam"

सं० टी०-लग्नपतिस्तथाऽष्टमस्थानाधिपतिर्यदि उभावपि लग्ने स्यातां कथंभूतौ एकस्मिन्नेव द्रेष्काणे स्थितौ तदा रोगिणः पृच्छायां मूर्तिर्नीरोगेति वाच्यम् ॥ १५१ ॥

अर्थ-लग्नस्वामी और अष्टम भावके स्वामी ये दोनों लग्नमें एकही द्रेष्काणमें हों तो रोगप्रश्नमें शरीर निरोग होगा ऐसा कहना चाहिये ॥ १५१ ॥

लग्नपो मृत्युपश्चापि मृत्यौ स्यातामुभौ यदि ॥
स्थितौ द्रेष्काण एकस्मिंस्तदा मृत्युर्न संशयः १५२

सं० टी०-लग्नप इति । लग्नपो लग्नेशः मृत्युपोऽष्टमस्थानाधिपः एतावुभौ प्रश्नलग्नादष्टमस्थानगतौ एकद्रेष्काणस्थितौ यदि भवतस्तदा रोगिणो मृत्युर्वाच्यः अत्र संशयो न, बुधैरिति शेषः ॥ १५२ ॥

अर्थ-यदि लग्नस्वामी और अष्टम भावके स्वामी ये दोनों अष्टमभावमें स्थित हों और एकही द्रेष्काणमें हों तो अवश्य मृत्यु होती है इसमें सन्देह नहीं ॥ १५२ ॥

लग्नपो लाभपश्चापि लाभे स्यातामुभौ यदि ॥
स्थितौ द्रेष्काणएकस्मिन्प्रष्टुर्लाभस्तदा ध्रुवम् १५३

"Aho Shrut Gyanam"

संटी०—लग्नस्वामी एकादशस्थानस्वामी लाभे एकादशे उभौ द्वौ यदि स्याताम् एकस्मिन्द्रेष्काणे स्थितौ तदा प्रष्टुर्ध्रुवं निश्चयेन लाभ स्यात् ॥ १५३ ॥

अर्थ—लाभप्रश्नमें यदि लग्नेश और ग्यारहवें भावका स्वामी ये दोनों लग्नसे ११ वें स्थानमें एक ही द्रेष्काणमें हों तो प्रश्नकर्त्ताको निश्चय लाभ होता है ॥ १५३ ॥

लग्नपः पुत्रपश्चापि पुत्रे स्यातामुभौ यदि ।
स्थितौ द्रेष्काण एकस्मिन्पुत्रप्राप्तिस्तदा भवेत् ॥

सं० टी०—लग्नस्वामी पुत्रस्थानस्वामी उभौ तौ द्वौ यदि सुतस्थाने स्याताम् एकस्मिन्द्रेष्काणे स्थितौ तदा पुत्रप्राप्तिर्भवेत् ॥ १५४ ॥

अर्थ—यदि सन्तानप्रश्नमें लग्नस्वामी और पञ्चम भावके स्वामी ये दोनों पञ्चम भावमें एकही द्रेष्काणमें हों तो पुत्रप्राप्ति होती है ॥ १५४ ॥

एवं द्वादशभावेषु द्रेष्काणैरेव केवलैः ॥
बुधो विनिश्चितं ब्रूयाद्भावेष्वन्येषु निस्पृहः १५५॥

संटी०—एवं पूर्वोक्तप्रकारेण द्वादशभावेषु केवलैर्द्रेष्काणैरेवं निश्चयं ब्रूयाद् बुधः पंडितः, अन्येष्वापि पृच्छार्थे विचारणीयमित्यर्थः ॥ १५५ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ-इसी रीतिसे बारहों भावोंमें केवल द्रेष्काणसे फलादेश निश्चयसे पण्डित कहे ॥ १५५ ॥

प्रश्नकाले सौम्यवर्गो यदि लग्नेऽधिको भवेत् ॥
ग्रहभावानपेक्षेण तदाऽऽख्येयं शुभं फलम् १५६॥

सं० टी०-यस्मिन्प्रश्नकाले सौम्यवर्गो लग्नेऽधिको भवेत् । कोऽर्थः ? यस्मिँल्लग्ने सौम्यग्रहाणां द्रेष्काणनवांशादयो वर्गा एव बलवत्त्वेनाधिकभावं भजंते इत्यर्थः । तदा शुभं फलमाख्येयं कथनीयमित्यर्थः ॥ १५६ ॥

अर्थ-यदि प्रश्नकालिक लग्नमें शुभग्रहोंके वर्ग अधिक हों तो ग्रह और भावादि विचार विनाही शुभ फल जानना चाहिये ॥ १५६ ॥

प्रश्नकाले क्रूरवर्गो लग्ने यद्यधिको भवेत् ॥
अशुभं फलमाख्येयं ग्रहापेक्षां विना तदा ॥ १५७॥

सं० टी०-यस्मिन्प्रश्ने क्रूरवर्गोऽधिको भवेत् क्रूरा एव लग्ने बहवो भवंतीत्यर्थः । तदापि ग्रहभावाद्यपेक्षां विनाऽप्यशुभमेव फलं वक्तव्यमिति ॥ १५७ ॥ इति द्रेष्काणादिद्वारं त्रयस्त्रिंशम् ॥ ३३ ॥

अर्थ-यदि प्रश्नकालिक लग्नमें पापग्रहोंके वर्ग अधिक हों तो ग्रहादि विचार विनाही अशुभ फल कहना चाहिये ॥ १५७ ॥

इति द्रेष्काणादिद्वारम् ॥ ३३ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

मूर्तौ छिद्रे द्वादशेऽर्कौ व्यये कर्मणि भूसुतः ॥
षष्ठांत्याद्याष्टमश्चंद्रो व्ययास्ते शेषखेचराः १५८॥
क्षेत्राधिपाकाशदेवीशाकिन्याद्याश्च देवताः॥
देवदोषांबुदेवात्मव्यंतरामिहरादयः ॥ १५९ ॥

सं० टी०—अथ दोषज्ञानद्वारमाह—मूर्तौ लग्ने छिद्रेऽष्टमस्थाने द्वादशे वाऽर्कः सूर्यो भवति, तथा द्वादशे कर्मणि दशमे स्थाने भूसुतो मंगलो भवति, तथा षष्ठे, अंत्ये द्वादशे, आद्ये मूर्तौ, अष्टमे च एतेषु स्थानेषु यदि चन्द्रो भवति, तथा व्यये द्वादशे अस्ते सप्तमे शेषखेचरा अपरे ग्रहा भवंति। किं तत् इत्याह—क्षेत्राधिपेति । यदि १।८।१२ स्थाने रविर्भवति तदा क्षेत्रपालस्य दोषः। यदि १।६।८। १२ चन्द्रो भवति तदाऽऽकाशदेवतादोषः । यदि १० । १२ मंगलो भवति तदा शाकिनीदोषः। यदि १२ । ७ बुधो भवति तदा वनदेवतादोषः। यदि १२ । ७ गुरुर्भवति तदा देवदोषः। यदि १२ ।७ शुक्रो भवति तदा जलदेवतादोषः। यदि १२। ७ शनिर्भवति तदा आत्मदोषो वृष्ट्यादि। यदि १२। ७ राहुर्भवति तदा प्रेतांतिकादिस्वकीयगृहदेवतादिदोषो वाच्यः। पाठांतरेणाह—"बह्व्यं ३ के ९ द्वादशे १२ षष्ठे ६ लग्नात्पापग्रहो

"Aho Shrut Gyanam"

यदि । हतो गदे जले शस्त्रे तस्य दोषः कुलोद्भवः ॥ १ ॥
चंद्रे देव्यो रवौ देवान्भौमे स्वकुलगोत्रजान् । बुधे विचित्र-
जनितो दोषः स्यात्कर्मसंभवः ॥ " इत्यादि ॥ १५८॥१५९ ॥
इति दोषज्ञानद्वारं चतुस्त्रिंशम् ॥ ३४ ॥

अर्थ-अब चौतीसवें द्वारमें दोषज्ञान लिखते हैं-यदि लग्न आठवें, बारहवें स्थानमें रवि, बारहवें और दशवेंमें मङ्गल, छठे, बारहवें, लग्न और आठवें भावमें चन्द्रमा. और शेष (बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु) ग्रह हों तो क्रमसे क्षेत्रपाल, आकाशदेवी, शाकिनी आदि वनदेवता, देवता जलदेवता, आत्म (स्वकीय) और प्रेतादिकोंका दोष क्रमसे जानना चाहिये। अर्थात् १-८-१२ में रवि हो तो क्षेत्रपालका दोष, १२-१० में मङ्गल हो तो आकाशदेवीका दोष, ६-१२-१-८ में चन्द्रमा हो तो शाकिनीदोष, १२-७ में बुध हो तो वनदेवता और इसी १२-७ में बृहस्पति हो तो देवता, शुक्र हो तो जलदेवता, शनि हो तो आत्मदोष, राहु हो तो प्रेतदोष जानना चाहिये ॥ १५८ ॥ १५९ ॥

इति दोषज्ञानद्वारम् ॥ ३४ ॥

यदींदुर्दिनचर्यायां शुभः स्यादुदयास्तयोः ॥
श्रेयास्तदाऽवगंतव्यं सकलोऽपि हि वासरः १६० ॥

"Aho Shrut Gyanam"

सं० टी०—अथ दिनचर्योद्वारमाह—नृपादीनां दिनचर्याप्रश्ने कोऽर्थः ? राजादिः कश्चिन्नरः पृच्छति अद्य दिनमध्ये मम शोभनमशोभनं वा भविष्यतीति तदा यदि चंद्रः उदयास्तयोः अर्थादुदयकालेऽस्तकाले च शुभो भवति तदा स सर्वोऽपि वासरः श्रेयान् कल्याणमय एव ज्ञेयः ॥ १६० ॥

अर्थ—अब पैंतीसवें द्वारमें दिनचर्या (राजा आदिकोंके प्रतिदिनमें शुभाशुभ फलका ज्ञान) लिखते हैं—यदि कोई पूछे कि, आज हमको शुभफल होगा या अशुभ ? तहां यदि उदय और अस्त इन दोनों समयमें चन्द्रमा शुभ हो तो सम्पूर्ण दिवस शुभ जानना चाहिये ॥ १६० ॥

राहौ वाथ कुजे क्रूरे परस्मिन्नपि खेचरे ॥
अष्टमे स्वगृहे चैव दिने चन्द्रेऽसिना वधः ॥ १६१ ॥

सं० टी०—कुशलतादिपृच्छालग्नाद्यष्टमस्थाने राहुर्मंगलो वाऽन्यो वा क्रूरः स्वक्षेत्रगतो भवति तस्मिन्नेव च दिने तत्रैवाष्टमस्थाने चन्द्रो भवति तदा वाच्यं तस्मिन् दिने खड्गादिना वधो भविष्यति ॥ १६१ ॥

अर्थ—यदि कोई पूछे कि मैं आज कुशलसे रहूँगा या नहीं ? तहां राहु या मङ्गल अथवा अन्यभी कोई पापग्रह अष्टमस्थानमें स्वराशिका हो और चन्द्रमा भी अष्टम हो तो खड्ग (तलवार) आदिसे मृत्यु कहना चाहिये ॥ १६१ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

दंतुरवदनः कृष्णो विज्ञेयो राहुदर्शने प्राणी ॥
षष्ठेऽष्टमे च जीवः कथयति च सन्निपातरुजम् १६२

सं० टी०-अत्रैव च जन्मकालस्वरूपमाह-जन्मराशौ वर्तमानो राहुर्यदि पूर्णदृष्ट्या जन्मलग्नं पश्यति वा प्रश्नकाले प्रश्नलग्नं पश्यति तदा वक्तव्यम् अयं बालको वा जनः दंतुरः प्रलंबदंतः स तथा कृष्णवर्णश्च वर्तत इति । तथा जन्मकाललग्नात्प्रश्नकाललग्नाद्वा षष्ठेऽष्टमे वा स्थाने जीवो भवति राहुर्वाऽथ दिनचर्यायामष्टमे स्थाने स्वगृहे मेषे मेषांशे, वृषे वृषांशे शुक्रो, मिथुने मिथुनांशे बुधः एवं योगे द्वितीयो राहुर्भौमो वा एवं सति यदि दिनचर्यायां चन्द्रस्तत्रास्ति तदा पंचदशघटीमध्ये खड्गप्रहारान्म्रियते चन्द्रं विनाऽप्यत्र योगे खड्गप्रहारो न तु चन्द्रं विना मृत्युः अपरखेचरः स्वक्षेत्रे तदंशे चन्द्रो राहुभौमयोरन्यतरेणायुक्तः कार्यकारीति रहस्यम् ॥ १६२ ॥
इति दिनचर्याद्वारं पञ्चत्रिंशम् ॥ ३५ ॥

अर्थ-अब जन्मलग्न तथा प्रश्नलग्नपरसे स्वरूप लिखते हैं-यदि लग्नपर राहुकी दृष्टि हो तो मनुष्य बडेबडे दांतवाला कृष्णवर्ण होता है और छठे या आठवें स्थानमें बृहस्पति हो तो वह मनुष्य सन्निपातसे युक्त होता है ॥ १६२ ॥

इति दिनचर्याद्वारम् ॥ ३५ ॥

"Aho Shrut Gyanam"

पृच्छंत्याः पितृमन्दिरे पितृगृहाभिज्ञाक्षरं गुर्विणी
पत्युश्चापि तदीयमंदिरगतं गुर्व्या अभिज्ञाक्षरम् ॥
शुक्लारब्धादिनव्यवस्थिततिथीन्दत्त्वा मुनींश्च ध्रुवान्
भागंवह्निभिरेककेनतनयोद्वाभ्यां सुता खेन खम्॥

सं०टी०—अथ गर्भादिप्रश्नद्वारमाह—तत्र पितृमन्दिरे पितुर्गृहे स्थितायाः गुर्व्याः गर्भिण्याः प्रश्ने पितृधृतनामाक्षरसंख्यायास्तथा पत्युः स्वामिनो नामाक्षरसंख्यायाश्चैक्यं कार्यम् । अथ पत्युर्मंदिरे गुर्व्यास्तद्गृहनामाक्षरसंख्यापतिनामाक्षरसंख्ययोरैक्यं कार्यं, पुनः तस्मिन् शुक्लारब्धेति शुक्लप्रतिपदमारभ्यामावास्यांतं यावद्वर्तमानातिथ्यंकसंख्यां दत्त्वा मुनींश्च ध्रुवान् सप्तध्रुवकान् दत्त्वा वह्निभि ३ र्भागं दत्त्वा एकशेषश्चेत्तनयो, द्वाभ्यां शेषाभ्यां सुता, खेन शून्येन खं शून्यं, गर्भो गलति जातो वा विनश्यति । तथा—"विषमस्थितेष्वेकाकी पुत्रजन्मप्रदः शनिः । राहुयुक्तस्तु तत्कालं विद्धः कालेन मृत्युदः ॥ १ ॥ पञ्चमांकप्रमाणेन पञ्चमाधिपतोऽथवा । मासज्ञानं तदा वाच्यं ग्रहयुग्दृष्टितो वशात् ॥२॥ यदींदुभौमशुक्राभ्यां गर्भो वा वीक्षितः शुभैः । तदाऽसौ जनयेत् पुत्रं नात्र कार्या विचारणा ॥ ३ ॥ शुक्रो वा चन्द्रमा वाऽपि नेक्षते

"Aho Shrut Gyanam"

यदि पञ्चमम् । तदा पुत्रस्य पृच्छायां न पुत्रोऽस्तीति कथ्यते ॥ ४ ॥ " ॥ १६३ ॥

अर्थ-अब छत्तीसवें द्वारमें गर्भप्रश्नादि लिखते हैं-यदि गर्भिणी स्त्री पिताके गृहमें हो तो पितासे धारित नाम और स्वामीके गृहमें हो तो सशुरालका नाम ग्रहणकरके जो अक्षर संख्या हो उसमें स्वामीकी भी नामाक्षरसंख्या मिलावे फिर शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे लेकर पूछनेके दिनमें जो तिथि हो वहां तक गिनकर जोड दे फिर सात ध्रुवाभी जोड दे योगाङ्कमें तीनका भाग दे, एक शेष बचे तो पुत्र, दो बचें तो कन्या, शून्य शेष बचे तो गर्भ शून्य कहना अर्थात् गर्भ गिरजायगा अथवा उत्पन्न होने परभी उस गर्भकी सन्ततिका नाश होगा ऐसा कहना चाहिये ॥ १६३ ॥

एकस्मिन्प्रकृतिः शुभेनसहितेसौख्यातिरेकःक्षपानाथेन श्रुतिरद्भुता प्रसराति क्रूरेण पीडाद्भवः ॥
शुक्रे सप्तमगे स्त्रियाः पतिगतं पुत्रादिकं वा पदं पृच्छंत्याः सुरतास्थितावनुभवोवाच्योऽष्टमस्थेपिच

सं० टी०-अथ पतिगतं पुत्रादिकम् अर्थात् पुत्रादिकविषयं, वा पदं स्थानादिकं पृच्छंत्याः स्त्रियाः प्रश्नकाले एकस्मिन् शुक्रे सप्तमगे तदा प्रकृतिः स्वभावो न विशेषः कश्चिदपि वाच्यः, शुभेन गुरुणा बुधेन वा सहिते शुक्रे

"Aho Shrut Gyanam"

सौख्यातिरेकः सुखाधिकत्वं, क्षपानाथेन सहिते शुक्रे सति अद्भुता श्रुतिः ख्यातिः प्रसरति विस्तारतां याति । क्रूरेण मंगलराहुशनीनामन्यतमेनापि सहिते पीडोद्भवः सौख्याभावः, एवं सुरतस्थितौ सप्तमस्थे शुक्रे योऽनुभवो विचारः कृतः सोऽष्टमस्थेऽपि विचार्य इत्यर्थः ॥ अथ कियतो विशेषान् दर्शयति-" लग्नाधिपे ह्यविनष्टे न बुभुक्षा मंगले सूर्ये । असृक्छिद्रे चंद्र सतौ चेत्स्यहजोऽतिसार आख्यातः ॥ १ ॥ छिद्र भौमार्कौ चेद्रुधिरोद्रेकश्च पित्तजोद्रेकः । सितभौमौ बलहीनौ सक्रूरशनिर्विविधरोगः ॥ २ ॥ सन्निपातरुजं कुर्यात्सक्रूरश्चेद्बृहस्पतिः । स्त्रीप्रश्ने छिद्गे भौमे विनष्टं योनिदूषणम् ॥ ३ ॥ शत्रुप्रश्ने तु षष्ठेशो मूर्तौ वाऽस्तिविधुस्तथा । यद्यन्यः षष्ठगः खेटः शत्रोः पक्षकरः स तु ॥ ४ ॥ अत्र भाटकपृच्छायां लग्नेशो भाटकप्रदः । सप्तगो भाटकग्राही भाटकोत्पत्तिकृन्नभः ॥५॥ चतुर्थमवसानं स्यादेषु सौम्यग्रहैः शुभम् । व्यस्ते व्यस्तं सुहृच्छत्रुमवस्थित्याद्यसर्वतः ॥६॥" ॥ १६४ ॥

अर्थ–यदि कोई स्त्री स्वामीसम्बन्धी या पुत्रसम्बन्धी या स्थानप्राप्ति सम्बन्धी प्रश्न करे तो प्रश्नलग्नसे सप्तमस्थानमें एक ही शुक्र हो तो जैसा है वैसाही रहेगा अर्थात् कोई स्थान आदि नहीं प्राप्त कर सकेगा और यदि शुभग्रह बृहस्पति बुधसे युक्त शुक्र सप्तममें हो तो सुखका आधिक्य होता है और चन्द्रमासे युक्त हो तो संसारमें बहुत

"Aho Shrut Gyanam"

कीर्ति फैले तथा पापग्रहसे युक्त हो तो पीडा (क्लेश) से युक्त जीविका मिले, यहां जैसे सप्तम स्थानपरसे विचार किया है वैसाही अष्टम स्थानपरसे भी विचार करना चाहिये ॥ १६४ ॥

तुर्यं पश्यति तुर्यपोऽस्ति निहितं क्रूरेऽपि तस्मिन्भवेन्नप्राप्तिःखलु खेचरे च सदधिष्ठानं तदिंदौ स्थिते॥ स्वामिप्रेक्षणवर्जितेऽपि च तदस्तित्वं न तद्वार्षिके लाभश्चन्द्रयुगीक्षणेन रहितं पूर्णं च चंद्रेक्षणम् १६५

सं० टी०-एकैकाकिन्यपि तुर्येपि चतुर्थाधिपतौ तुर्यं चतुर्थं स्थानं पश्यति निहितमस्ति निधानमस्तीति वाच्यम्। क्रूरे च तस्मिन् चतुर्थाधिपे क्रूरे तुर्यं पश्यति स्थिते वाऽस्ति निहितं परं तस्य न प्राप्तिर्न भवेदित्यर्थः। खेचरेऽन्यास्मिन्सूर्यप्रभृतिकग्रहे तत्र स्थिते वा निहितं निधानं सदधिष्ठानं साधिष्ठायकमस्ति तथा स्वामिप्रेक्षणवर्जितेऽपि तुर्ये नापि दृष्टे चतुर्थे इन्दौ चन्द्रमसि तत्र वा स्थिते वीक्षिते वा नीचे वाऽस्तमिते वा तदस्तित्वम् तस्य निहितस्यास्तित्वं वाच्यम्। परं चन्द्रयुगीक्षणेन रहिते तुर्यस्थाने लाभस्थाने वा इति विशेषः। चन्द्रयोगपूर्णेक्षणेन विना तद्वार्षिके न लाभः पूर्णं च चन्द्रेक्षणं निधानप्राप्तौ ॥ १६५ ॥

अर्थ-कोई पूछे कि, अमुक स्थानमें गाडा द्रव्य है या नहीं ? वहाँ चतुर्थभावका स्वामी चौथे स्थानको देखता हो तो द्रव्य है ऐसा कहना और यदि चतुर्थ स्थानपर पापग्रहकी भी दृष्टि आदि हो तो द्रव्य है

"Aho Shrut Gyanam"

परन्तु प्राप्ति नहीं होगी ऐसा कहना, तथा चतुर्थ स्थानमें कोई भी ग्रह हो तो द्रव्य उत्तम पात्रादिकमें कहना और यदि चौथा स्थान अपने स्वामीकी दृष्टिसे वर्जित हो तो भी यदि चन्द्रमा चौथे स्थानमें हो तो द्रव्य कहना और चन्द्रकी दृष्टि योग आदि नहीं हो तो एक वर्षके पीछे लाभ कहना, कारण कि, चन्द्रमाकी दृष्टि पूर्ण विचार करना चाहिये ॥ १६९ ॥

योगेस्तित्वविधायकेहिमरुचिर्नीचेविनष्टोऽपिवाऽ-
मावास्यानिकटस्थितोपिकथितःप्राज्ञैःप्रमाणंतथा।
लाभेचन्द्रयुगीक्षणेनभवतः सौम्यस्यते स्तस्तदा
वर्षेन्यत्रनिधिग्रहाय सुधियाकार्यःप्रयत्नोमहान् ॥

सं० टी०-चन्द्रदृष्टिः पूर्णा वाच्या अत एवाह-योगेस्तित्वविधायके निधानास्तित्वदर्शके प्रागुक्तेपि योगे हिमरुचिर्विनष्टोऽथवाऽमावास्यानिकटस्थोपीति स्पष्टम् । तदा प्राज्ञैः प्रमाणं निधिप्राप्तये उद्यमो न कार्यः, सृतं सम्पूर्णं जातमिति कथितं भणितं, तथा लाभे एकादशभवने चन्द्रयुगीक्षणे न, चन्द्रसंयोगदृष्टी न भवतः । एवं सौम्यस्यान्यस्य ग्रहस्य ते संयोगदृष्टी भवतः तदा वर्षेऽन्यत्र प्रश्नवर्षानंतरे वर्षे निधिग्रहणाय प्रयत्नः कार्यः ॥ १६६ ॥

अर्थ-यदि पूर्व कहे अनुसार द्रव्य होनेका योग हो और चंद्रमा नीचमें हो, नष्ट हो अथवा अमावास्याके निकटमें हो तो द्रव्य निका-

"Aho Shrut Gyanam"

लनेके लिये उद्यम नहीं करना चाहिये, इसी तरह ग्यारहवें स्थानमें चंद्रमा युक्त न हो और देखता भी नहीं हो और अन्य शुभग्रहोंका योग दृष्टि हों तो एक वर्षके पीछे द्रव्य निकालनेका यत्न करे ॥ १६६ ॥

जायास्थानस्य भावा न भृगुसुतमृते नो शनिं धर्मभावा ९ नो सूर्यं कर्म १० भावा न बुधहिमकरौ लाभ ११ भावा भवंति ॥ विद्यास्थानस्य भावा ५ न गुरु ६ मवनिजं ७ तातनिस्थानभावा नेंदुं मृत्युर्न सर्वे १२ न च तनयपदं ५ भार्गवं श्वेतरश्मिम् ॥ १६७ ॥

सं० टी०-भृगुजम् ऋते विना जायास्थानस्य भावा इत्यादिपदत्रयस्य इन्दुं विना न मृत्युस्तच्च प्रागुक्तमेव न केवलं मृत्युरपरे सर्वेऽपि वा इन्दुं विना न स्युः । शुक्रः भार्गवः । श्वेतरश्मि चंद्रं विना न च तनयपदं संतानं स्यादिति । एतच्च काव्योक्तग्रहपरिविज्ञानं न स्यादिति तेषां परिज्ञानाय कारणमाह । "दिवसर्क्षभुक्तनाड्यो धिष्ण्यहता भुक्तिभाजिता लब्धम् । भुक्तर्क्षयुतं सांप्रतधिष्ण्यं शेषांशका ग्रहैर्भोग्याः ॥ १ ॥" व्याख्या-यदा नक्षत्रं लगति तदा दिवसर्क्षभुक्तघटिकाः धिष्ण्यहताः सप्तविंशति २७ गुणाः, भुक्तनक्षत्रस्य समस्तभुक्त्य षष्टिहीनयाऽधिकया वा विभाजिता विभागे यल्लब्धं तद्भुक्तर्क्षयुतम् । आदित्यचन्द्रकुजादिभिः यान्यश्विन्यादीनि नक्षत्राणि

"Aho Shrut Gyanam"

भुक्तानि तैर्भुक्तर्क्षैः संगतं सांप्रतधिष्ण्यमश्विन्यादिपुनर्गणनायां वर्तमानिकं नक्षत्रं स्यात् । शेषांशा भोग्याः, यल्लब्धं तदतीत-नक्षत्रं शेषांशा भुज्यमाननक्षत्रभोग्यांशाः । उदाहरणम्—अद्या-श्विनीनक्षत्रस्य गतघटी ४ सप्तविंशतिगुणनया १०८ षष्टि-६० भागे लब्धं १ शेषांशाः ४८ ततोऽश्विन्यादिरविभुक्तर्क्षै द्वादशसंयुता १२ ऐक्ये जाता १३ इति त्रयोदशाश्विन्यादि-ऋक्षाणि चतुर्दशचित्राधिष्ण्यस्यांशाः ४८ वर्तते । एवं चंद्र-भुक्त्याऽश्विन्यादेधिष्ण्यं २७ युत ऐक्ये जातं २८ ततः सप्त-विंशतिगता अश्विनीनक्षत्रमपि भुक्तं भुज्यमानभरण्यंशा ४८ वर्तते । एवमन्येष्वपि ग्रहेषु ज्ञेयम् । एते नक्षत्रस्य षष्टिषु घटिषु भुक्तौ नक्षत्रं प्रांते घटी ३ नव ९ पलानि भागः एतत्परिज्ञाय नवांशकल्पनया ग्रहान्परिज्ञाय जायास्थानस्य भावा इत्यादि विचारणीयम् । एतच्च ग्रहाणां विषादहर्षस्थाने परिज्ञानं विना न स्यादिति वृत्तिकारस्तज्ज्ञानार्थं श्लोकानाह—" सषष्ठं द्वादशं लग्नाद्वक्रितोऽस्तमितोऽग्रगः। क्रूराक्रांतादिना नष्टो नीचस्थो मित्र-नीचगः ॥ १ ॥ सूर्यस्याग्रगवान्राहोर्मुखे पुच्छेऽथ वा स्थितः । स्वगृहात्सप्तराशिस्थो ग्रहः कार्यकरो नहि ॥ २ ॥ " युग्मम् । "एकराशौ सिते पक्षे चन्द्रो नेष्टः कुजेक्षितः । कृष्णे पक्षे शशी मन्दयुक्तः श्रेष्ठश्च नष्टदः ॥ ३ ॥" अथ चतुर्धा ग्रहाणां हर्षस्था-नान्याह—लग्ने बुधः शशी वह्नौ ३ षष्ठे भौमः६ कलत्रगः । शुक्रो नवमगः सूर्यो ९ लाभे जीवः ११ शनिर्व्यये १२"॥ १६७॥

"Aho Shrut Gyanam"

अर्थ-स्त्री भाव (सप्तम) का विचार शुक्र विना नहीं होता है और शनैश्वर विना धर्म (नवम) भावका विचार नहीं होता है सूर्यके विना कर्म (दशम) भावका विचार नहीं होता है, बुध और चन्द्रमा विना लाभ (एकादश) भावका विचार ,नहीं होता है, बृहस्पतिके विना विद्याभाव (पञ्चमस्थान) का विचार नहीं होता है, मङ्गलके विना पितृस्थानका विचार नहीं होता है, चन्द्रमाके विना मृत्यु और अन्यभी सभी भावोंका विचार नहीं है अर्थात् चन्द्रबल सभी भावोंमें देखना मुख्य और शुक्र तथा चन्द्रमा विना पुत्र (पञ्चम) भावका विचार नहीं होता है अर्थात् जो ग्रह जिस स्थानका कहा है उसका योग दृष्टिसे उस भावकी वृद्धि अन्यथा हानि होती है ॥ १६७॥

लग्नं १ चन्द्रोऽस्ति यस्मिं २ स्तदथ दिनमणिर्यत्र ३ तद्यत्र जीवस्तन्नीचोऽस्तंगतो वा न यदि सुरगुरुर्वीक्षितश्चेत्तदाद्यम् ४ ॥ वित् १ काव्य २ क्ष्मांगजानां ३ भवति किल बली यस्त्रयाणां तदीयं दौर्बल्यं यत्र मन्दस्तदपि च न बली शिष्टयोर्यस्तदीयम् ॥ १६८ ॥

सं० टी०-प्रच्छकस्य वेलायां तात्कालिकमुदितं लग्नं निरीक्षणीयम् १, द्वितीये प्रश्ने यस्मिन्भावे चन्द्रोऽस्ति तं भावमादौ कृत्वा निरीक्ष्यम् २, तथा तृतीयप्रश्ने यत्र स्थाने सूर्यस्तमादौ

"Aho Shrut Gyanam"

विधाय दृश्यम् ३, तच्चतुर्थप्रश्नवेलायां यत्र बृहस्पतिः स्यात्तदाद्यम् आदौ करणीयम् ४, परं स नीचास्तंगतो वक्रितोपि न स्यात्तदा, तदनंतरं पञ्चमे प्रश्ने वित्काव्यक्ष्मांगजानां भवति किल बली यस्तदीयं क्रमेण, बुधशुक्रमंगलानां मध्ये बलवान् यो यत्र स्थाने तदीयमाद्यं करणीयम् ५, षष्ठे प्रश्ने शनिः स शनिः निर्बलश्चेत्तदा शिष्टयोः प्रागुक्तयोर्बुधशुक्रयोः शुक्रमंगलयोर्बुधभौमयोर्मध्ये यो बली बलवांस्तदीयस्थानमाद्यं करणीयम् । एवं षट् प्रश्नलग्नानि ॥ १६८ ॥

अर्थ—अब एक समयमें अनेक प्रश्नोंका उत्तर करनेका प्रकार लिखते हैं—प्रथम प्रश्नमें लग्नपरसे विचार करना चाहिये, द्वितीय प्रश्नमें जिस राशिपर चन्द्रमा हो उस राशिको लग्न कल्पना करे, तीसरे प्रश्नमें रवि जिस राशिमें हो उसीको लग्न कल्पना करे, चौथे प्रश्नमें गुरु जिस राशिमें हो उसी राशिको लग्न कल्पना करे परन्तु यदि गुरु नीच, अस्त और वक्री न हो तो । इसके अनन्तर पञ्चम प्रश्नमें बुध, शुक्र मंगल इनमें जो बली हो उस ग्रहके स्थानको लग्न कल्पना करे, छठे प्रश्नमें शनैश्चर जिस राशिमें हो उसी राशिको लग्न माने परन्तु यदि शनि निर्बल हो तो पूर्व कहे (शुक्र, बुध, मंगल) मेंसे जो दो अवशिष्ट हैं उनमेंसे जो बली हो उसकी राशिको लग्न कल्पना करे ॥ १६८ ॥

एवं षट्प्रश्नलग्नान्यथच षडपराण्येवमेषांद्वितीयान्येतेनैव क्रमेण स्फुटमिदमुदितंद्वादशप्रश्नलग्नम् ॥

"Aho Shrut Gyanam"

एतेषां द्वादशानामपि च धनपदैर्द्वादशद्वादशैवं ता-
र्तीयीकैस्तथान्यैरपि सकलमिदं पूर्णमब्ध्यब्धिचंद्रैः ।
ग्रहभावप्रकाशाख्यं शास्त्रमेतत्प्रकाशितम् ॥
लोकानामुपकाराय श्रीपद्मप्रभुसूरिभिः ॥ १७० ॥

सं० टी०—अथवैषां प्रागुक्तानां षण्णां स्थानानि अक्षराणि प्रश्नलग्नानि स्युः एतेनैव क्रमेण स्फुटमिदमुदितं द्वादशप्रश्नलग्नमेतेषां द्वादशानामपि धनपदैर्द्वादशभिः द्वादशप्रश्नलग्नानि स्युः । एवमेषां द्वादशानां तार्तीयीकैस्तृतीयस्थानैर्द्वादशप्रश्नलग्नानि स्युः । एवमन्यैरपि एतेषां प्रागुक्तानां द्वादशानां चतुर्थस्थानैर्द्वादशप्रश्नलग्नानि । एवं निष्पद्यमानद्वादशप्रश्नलग्नैरब्ध्यब्धिचन्द्रैश्चतुश्चत्वारिंशदधिकशतसंख्यैः प्रश्नलग्नैरिदं जगत्सर्वमपि पूर्णं, चन्द्रशब्दो मंगलस्थो यद्वा बहुजनपृच्छायां केंद्रचतुष्काच्च, पणफरचतुष्कम् । आपोक्लिमचतुष्कं निर्दिष्टं, जिनचरेन्द्रेण ताजिकेन च चन्द्रो ग्रहाणामुपरि भ्रामयेत् । अयमर्थः— पूर्वमुदितलग्नेन निर्णयः १ पशुपस्य ग्रहस्य चन्द्रो मिलति तस्माद्भावात्तृतीयनिर्णयः । इत्यादि ज्ञेयम् । अस्मिन् शास्त्रे मुन्थशिलादियोगचतुष्टयस्य प्रागुक्तस्य व्याख्यानाय श्लोकानाह—"तिथि १५ सूर्यै १२ गजैः ८ सप्त ७ नव ९ पर्वत ७ [illegible] ९ शकैः॥ सूर्यादिरेकराशिस्थः शीघ्रप्रश्ने स्थिरे ग्रहे ॥ १ ॥ परस्य मन्दखेटस्य दीप्तैर्मुथशिलः स्मृतः । शीघ्रोऽल्पांशे-

"Aho Shrut Gyanam"

धनैर्मन्दैर्दृष्टः सैवेत्थशालकः ॥ युग्मं पश्चात्पुरः शीघ्रमेकराशौ तथा दृशि । प्राग्वज्जाते भवेद्योगो मध्यगो मुसरिःफकः ॥ मिथो दृशं विना खेटाद्द्वयांतः शीघ्रगो ग्रहः " ॥ १६९ ॥ १७० ॥ इति गर्भादिप्रश्नद्वारं षट्त्रिंशम् ॥३६॥

अर्थ—इसी रीतिसे (पूर्वश्लोकमें कहे अनुसार) छः लग्न कल्पना करनी, फिर इससे भी अधिक प्रश्न विचारमें पूर्व कहे हुये छः स्थानोंसे अन्य जो छः हैं उनमें क्रमसे बलाबल विचारकर कल्पना करनी, इसी प्रकार एक लग्नपरसे बारह प्रकारोंके प्रश्नलग्न कल्पित होते हैं, इसी प्रकार धनस्थानसे बारह, फिर तृतीय स्थानसे बारह, एवम् एकसौ चौवालिस लग्न कल्पित हो सकते हैं ॥ १६९ ॥ श्रीपद्मप्रभुसूरि नामक आचार्यद्वारा लोकोंके उपकारके लिये यह ग्रहभाव प्रकाशनामक (भुवनदीपक) शास्त्र प्रकाशित किया गया है ॥ १७० ॥

इति मिथिलादेशांतर्गतकनिगामग्रामनिवासिश्रीबलुयेशर्मात्मज-
श्रीबच्चूशर्मकृतभाषाटीका समाप्ता ॥

समाप्तोऽयं ग्रन्थः ।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास, "लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस, कल्याण—बम्बई.

खेमराज श्रीकृष्णदास, "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस, खेतवाडी—बम्बई.

"Aho Shrut Gyanam"

શ્રી જિનશાસન જય હો !!!

॥ શ્રી ગૌતમસ્વામીને નમઃ ॥ ॥ શ્રી સુધર્માસ્વામીને નમઃ ॥

જિનશાસનના અણગાર, કલિકાલના શણગાર પૂજ્ય ભગવંતો અને જ્ઞાની પંડિતોએ શ્રુતભક્તિથી પ્રેરાઈને વિવિધ હસ્તલિખિત ગ્રંથો પરથી સંશોધન-સંપાદન કરીને અપૂર્વ જહેમતથી ઘણા ગ્રંથોનું વર્ષો પૂર્વે સર્જન કરેલ છે અને પોતાની શક્તિ, સમય અને દ્રવ્યનો સદ્વ્યય કરીને પુણ્યાનુબંધી પુણ્ય ઉપાર્જન કરેલ છે. કાળના પ્રભાવે જીર્ણ અને લુપ્ત થઈ રહેલા અને અલભ્ય બની જતા મુદ્રિત ગ્રંથો પૈકી પૂજ્ય ગુરુદેવોની પ્રેરણા અને આશીર્વાદથી સં.૨૦૬૫માં ૫૪ ગ્રંથોનો સેટ નં-૧ તથા સં.૨૦૬૬માં ૩૬ ગ્રંથોનો સેટ નં-૨ સ્કેન કરાવીને મર્યાદિત નકલ પ્રીન્ટ કરાવી હતી. જેથી આપણો શ્રુતવારસો બીજા અનેક વર્ષો સુધી ટકી રહે અને અભ્યાસુ મહાત્માઓને ઉપયોગી ગ્રંથો સરળતાથી ઉપલબ્ધ થાય.

પૂજ્ય સાધુ-સાધ્વીજી ભગવંતોની પ્રેરણાથી જ્ઞાનખાતાની ઉપજમાંથી તૈયાર કરવામાં આવેલ પુસ્તકોનો સેટ ભિન્ન-ભિન્ન શહેરોમાં આવેલ વિશિષ્ટ ઉત્તમ જ્ઞાનભંડારોને ભેટ મોકલવામાં આવ્યા હતા. આ બધાજ પુસ્તકો પૂજ્ય ગુરુભગવંતોને વિશિષ્ટ અભ્યાસ-સંશોધન માટે ખુબજ જરુરી છે અને પ્રાયઃ અપ્રાપ્ય છે. અભ્યાસ-સંશોધનાર્થે જરૂરી પુસ્તકો સહેલાઈથી ઉપલબ્ધ બને તેમજ પ્રાચીન મુદ્રિત પુસ્તકોનો શ્રુત વારસો જળવાઈ રહે તે શુભ આશયથી આ ગ્રંથોનો જીર્ણોદ્ધાર કરેલ છે. જુદા જુદા વિષયોના વિશિષ્ટ કક્ષાના પુસ્તકોનો જીર્ણોદ્ધાર પૂજ્ય ગુરૂભગવંતોની પ્રેરણા અને આશીર્વાદથી અમો કરી રહ્યા છીએ. તો અભ્યાસ તથા સંશોધન માટે વધુમાં વધુ ઉપયોગ કરીને શ્રુતભક્તિના કાર્યને પ્રોત્સાહન આપશો.

લી.શાહ બાબુલાલ સરેમલ બેડાવાળાની વંદના

મંદિરો જીર્ણ થતાં આજકાલના સોમપુરા દ્વારા પણ ઊભા કરી શકાશે.....!
પણ એકાદ ગ્રંથ નષ્ટ થતા બીજા કલિકાલસર્વજ્ઞ કે
મહોપાધ્યાય શ્રી યશોવિજયજી ક્યાંથી લાવીશું...???